ओ३म्

वैदिक संस्कृति का उद्घोषक

वैदिक सार्वदेशिक

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली का साप्ताहिक मुख-पत्र

शुल्क :- एक प्रति 5 रुपया (भारत में) वार्षिक 250 रुपये तथा आजीवन 2500 रुपये

वर्ष 18 अंक 31 कुल पृष्ठ-8 9 से 15 फरवरी, 2023 दयानन्दाब्द 198 सृष्टि सम्वत् 1960853123 सम्वत् 2079 फा. कृ.-04

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की द्वितीय जन्म शताब्दी के उपलक्ष्य में सभी आर्य समाजें सार्वजनिक स्थानों पर कार्यक्रम आयोजित करें

घर-घर जाकर महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के सन्देश को आम आदमी तक पहुँचायें

अपने क्षेत्र के सभी प्रतिष्ठित लोगों को सत्यार्थ प्रकाश व स्वामी दयानन्द जी की जीवनी भेंट करें

प्रभात फेरी, शोभा यात्रा, विचार संगोष्ठी, भाषण प्रतियोगिता व लेख प्रतियोगिताएँ करके महर्षि के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से आम जनता को अवगत करायें

- स्वामी आर्यवेश

युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने समाज की विविध कुरीतियों, रूढ़ियों, वेद विरुद्ध मान्यताओं को चुनौती देकर आर्य समाज की स्थापना की थी। उन्होंने वेदों का अनुशीलन किया और उन्हीं के अनुसार समाज के सर्वांगीण परिष्कार का निश्चय किया। स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने देश को आजाद कराने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। उनके अनेक शिष्य स्वतंत्रता आन्दोलन में शहीद हुए। स्वामी जी की प्रेरणा से हजारों आर्यों ने अंग्रेज के विरुद्ध आन्दोलन करके जेल यातनाएं सही। इतिहास के पन्नों पर अनेक उदाहरण मिलते हैं, जिनके आधार पर कहा जा सकता है कि स्वतंत्रता आन्दोलन में सर्वाधिक योगदान आर्यों का रहा। स्वामी श्रद्धानन्द, स्वामी स्वतंत्रतानन्द, श्यामजी कृष्ण वर्मा, भाई परमानन्द, लाला लाजपत राय, शहीदे आजम सरदार भगत सिंह व उनका पूरा परिवार, राम प्रसाद बिस्मिल, अशफाक उल्ला खां, ठाकुर रोशन सिंह, राजेन्द्र लाहिड़ी, चन्द्रशेखर आजाद, यशपाल, बहन शास्त्री देवी, दुर्गा भाभी आदि स्वनाम धन्य क्रांतिकारी आर्य समाज की भट्ठी से तप कर निकले थे। स्वामी दयानन्द जी के गुरु प्रज्ञाचक्षु स्वामी बिरजानन्द जी ने 1857 की क्रांति और उसके पश्चात् स्वतंत्रता आन्दोलन को आगे बढ़ाने में अपनी ऐतिहासिक भूमिका निभाई थी। उन्होंने राजस्थान और उत्तर प्रदेश की कई रियासतों के राजाओं सर्वखाप पंचायत के प्रधानों व विभिन्न समुदायों के संगठन प्रमुखों को संगठित होकर अंग्रेज के विरुद्ध लड़ाई लड़ने की प्रेरणा दी थी। स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने सामाजिक क्षेत्र में व्याप्त कुरीतियों यथा बाल विवाह, सती प्रथा, स्त्रियों और शूद्रों को शिक्षा से वंचित रखने की परम्परा, जाति, समुदाय, स्त्री-पुरुष, गरीब-अमीर, आदि के आधार पर चल रहे भेदभावों के विरुद्ध समाज को झकझोरा। उन्होंने विधवा विवाह एवं स्त्री शिक्षा का समर्थन करके नारी जाति का उपकार किया। समाज में अछूत के नाम पर तिरस्कृत लोगों को सम्मान प्रदान करने का रास्ता खोला। शिक्षा के क्षेत्र में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने क्रांतिकारी घोषणा की और कहा कि चाहे कोई राजकुमार हो या राजकुमारी चाहे दरिद्र की सन्तान हो सबको तुल्य वस्त्र, खान-पान व आसन मिलने चाहिए। यह जाति नियम व राजनियम होना चाहिए कि प्रत्येक बालक विद्यालय में जाये। स्वामी दयानन्द जी ने

अनिवार्य शिक्षा, निःशुल्क शिक्षा तथा समान शिक्षा पर बल दिया है। ताकि समाज में प्रचलित समस्त भेदभाव समाप्त हो सके और सबको उन्नति के समान अवसर मिल सकें।

नव-जागरण के पुरोधा, आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती का जन्म दिवस जहाँ ई. सम्वत् के अनुसार 12 फरवरी को है वहीं इस वर्ष फाल्गुन बदी नवमी विक्रमी सम्वत् 2079 तदनुसार 15 फरवरी, 2023 दिन बुधवार तथा ऋषि बोधोत्सव 18 फरवरी, 2023 शुक्रवार को पड़ रहा है अतः इन पावन पर्वो को अत्यन्त धूमधाम से समारोह पूर्वक अपने-अपने क्षेत्र में मनाएँ। उनका यह 199वाँ जन्म दिवस है। उनके जन्म की दूसरी शताब्दी वर्ष-2024 में आ रही है। इस उपलक्ष्य में आर्य समाज पूरे विश्व में विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से महर्षि के संदेश को जन-जन तक पहुंचाने के लिए कृत संकल्प हो।

इस वर्ष महर्षि दयानन्द जी के जन्म दिवस एवं ऋषि बोधोत्सव के पर्वों के अवसर पर बृहद यज्ञों का आयोजन करें और यह आयोजन आर्य समाज से बाहर निकल कर जैसे पार्कों अथवा अन्य सार्वजनिक स्थलों पर किये जायें तो अत्योत्तम रहेगा। इन बृहद यज्ञों में आर्य सदस्यों, परिवारों के अतिरिक्त जन सामान्य को भी प्रेम पूर्वक आमन्त्रित किया जाना चाहिए।

इसी प्रकार प्रत्येक आर्य समाज प्रभातफेरी, शोभा यात्रा, विचार गोष्ठी, छात्र-छात्राओं की भाषण प्रतियोगिताएं, लेख प्रतियोगिताएं एवं आम सभाओं का आयोजन करके स्वामी जी के संदेश को जन-जन तक पहुंचाने का प्रयत्न करें। क्षेत्र के समस्त प्रतिष्ठित महानुभावों (डॉक्टर, वकील, व्यापारी, जनप्रतिनिधि व अन्य धार्मिक, राजनीतिक संगठनों के नेताओं) को महर्षि दयानन्द जी की जीवनी तथा सत्यार्थ प्रकाश भेंट करें।

आर्य समाज के कार्यकर्ता अपने-अपने क्षेत्र के प्रत्येक घर तक पहुंचकर महर्षि दयानन्द जी के चित्र लोगों को दें और उनके घरों में चित्र लगवायें। सभी आर्य समाजों के बाहर महर्षि दयानन्द जी के किसी एक सुन्दर वाक्य अथवा सन्देश का होर्डिंग जिसमें महर्षि का चित्र भी हो उसे लगवायें। इसी प्रकार प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाएं, जिला आर्य प्रतिनिधि सभाएं, आर्य शिक्षण संस्थाएं, गुरुकुल, आश्रम व युवा संगठन भी महर्षि के संदेश को जन-जन तक पहुंचाने के लिए प्रान्तीय एवं जिला स्तर के सम्मेलनों का आयोजन करें जिनमें विभिन्न धार्मिक, सामाजिक एवं राजनीतिक संगठनों के लोगों को आमंत्रित करके महर्षि दयानन्द जी के प्रति उद्गार प्रकट करवायें। यदि सभी आर्यजन अपने-अपने स्तर से उपरोक्त समस्त सभी कार्य योजनाओं को क्रियान्वित करने में जुट गये तो निश्चित रूप से हम पूरे विश्व में करोड़ों लोगों तक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के संदेश को पहुंचाने में सफल होंगे।

केन्द्र सरकार ने निर्णय लिया है कि अगले एक वर्ष तक पूरे देश में महर्षि दयानन्द जी की दूसरी जन्म शताब्दी को सरकार का संस्कृति मंत्रालय मनायेगा इसके लिए अनेक कार्यक्रम आयोजित होंगे, किन्तु हम अपने स्तर पर भी अपने कर्त्तव्य का निर्वहन करते हुए उपरोक्त योजनाओं को अभी से लागू करना प्रारम्भ करें। यही सभी आर्यों से विनम्र प्रार्थना है।

सम्पादक - प्रो. विट्ठलराव आर्य

महर्षि के मौन उपदेश

– श्री इन्द्रदेव ''मेधार्थी'' गुरुकुल झज्जर

महर्षि दयानन्द जी महान् समाज सुधारक के साथ-साथ तत्वद्रष्टा महान् क्रांतदर्शी योगी भी थे। उन्होंने अपने मन्तव्यों को ग्रन्थों एवं व्याख्यानों द्वारा सीधे सरल शब्दों में सुस्पष्ट सबके समक्ष रख दिया है। जिनके धारण से आज लाखों मनुष्य स्वयं को महर्षि का ऋणी समझते हैं। पुनरपि ''अन्त भला सो भला'' उक्तयनुसार लोगों की यह जिज्ञासा होना स्वाभाविक है कि उस दिव्य आचार्य ने महाप्रयाण करते समय हमें क्या आदेश दिया। उनकी स्वयं की अवस्था मृत्यु समय कैसी थी। इस जिज्ञासा पूर्ति के लिये महर्षि के अन्तिम वचनों को पाठकों के समक्ष रखता हूँ।

महर्षि का प्रथम मौन उपदेश

यह तो पहले ही लिख चुका हूँ कि महर्षि कोरे सुधारक ही नहीं थे, अपितु वे वास्तविक रूप में ''सत्यं शिवं सुन्दरम्' के उपासक भी थे और उसी की प्रेरणा से उन्होंने यह सुधार का मार्ग अपनाया था। 1883 ई0 30 अक्टूबर का दिन संसार के इतिहास में अमर रहेगा। यह दिन दीपावली का था। भयंकर विषपान के कारण महर्षि महीनों से अति बीमार थे। आज 11 बजे से उनके श्वास की गति बहुत बढ़ गई थी। सारे शरीर पर विष के कारण छाले पड़े हुए थे, गला बैठ गया था, भयंकर कालकूट विष आदित्य ब्रह्मचारी के परिपुष्ट शरीर को जीर्ण-शीर्ण कर रहा था। श्री पं0 गुरुदत्त जी के साथ लाहौर से आये हुए लाला जीवनदास जी ने पूछा, महाराज! अब आप कहाँ हैं? इसके उत्तर में महर्षि ने कहा- ''ईश्वरेच्छा में।'' यह वाक्य सामान्य अथवा आकस्मिक वाक्य नहीं है। अपितु इससे महाराज की आन्तरिक स्थिति का स्पष्ट रूप से ज्ञान होता है। थोड़ी-थोड़ी देर में जब रोग का आक्रमण अति तीव्रता से होता, तब महर्षि अपनी वृत्ति को अभ्यान्तर कर लेते थे जिसे सामान्य लोग मूर्छा अवस्था मानते थे। किन्तु वास्तविक बात यह है कि सभी योगीजन जब शरीर, इन्द्रिय, मन आदि को नितान्त अशक्त समझते हैं, तब उससे संबन्ध तोड़कर ईश्वर मग्न हो जाते हैं, और ईश्वरेच्छा में आनन्द से रहते हैं, उन्हें उस समय शरीर के दुःखों का अनुभव नहीं होता। अतः ''मैं ईश्वरेच्छा'' में हूँ यह महर्षि का वाक्य उनकी ब्रह्मस्थिति का द्योतक है।

महर्षि का द्वितीय मौन उपदेश

इसके अतिरिक्त एक वाक्य और जो आज तक लोगों के लिए रहस्य का विषय बना हुआ है। महर्षि के देहावसान के एक घण्टा पूर्व पाँच बजे किसी भक्त ने पूछा, आप श्रीमानों का चित्त कैसा है? इस पर महर्षि ने कहा-अच्छा है, तेज और अन्धकार का भाव है। महर्षि के इस उत्तर का अभिप्राय निश्चित रूप से वहां कोई न समझ सका। किन्तु बाद में लोग अपनी-अपनी ऊहापोहानुसार इस प्रहेलिका का अर्थ लगाने लगे। जब वाक्य की ठीक संगति न लगी तब किसी ने कहा कि महर्षि को उस समय असह्य पीड़ा थी, भयंकर रोग से वे अचेत जैसे हो रहे थे। अतः यह वाक्य सन्निपात रोग में होने वाले प्रलाप के समान है। इसका कोई विशेष अर्थ सम्भव नहीं।

कुछ लोग कल्पना का सहारा लेकर आगे बढ़े और कहा, उस समय सूर्यास्त होने को था, अतः कुछ ही प्रकाश अवशिष्ट रह गया था। उधर रात्रि का अन्धकार भी भूमण्डल पर छा जाना चाहता था। इस दिन रात के संगम का ही वर्णन महर्षि ने इन शब्दों में (तेज और अन्धकार का भाव है) व्यक्त कर दिया। कुछ लोगों ने इसका अभिप्राय यह समझा कि उस दिन अमावस्या की घोर अन्धकारमय रात्रि थी, कृष्ण पक्ष की समाप्ति के साथ-साथ शुक्ल पक्ष का आरम्भ भी हो रहा था। अतः इस आकस्मिक कृष्ण शुक्ल पक्ष की सन्धि को ही महर्षि ने तेज अन्धकार के रूप में व्यक्त कर दिया। कुछ विचारक इससे भी आगे बढ़ते हैं और वे कहते हैं कि- उस समय वेदज्ञान के अभाव में सर्वत्र अज्ञान तिमिर फैला हुआ था। महर्षि के जीवन भर के पुरुषार्थ करने से कहीं-कहीं अन्धकार का नाश होकर ज्ञान रूपी तेज चमकने लगा था। महर्षि के जीवन की साध भी इसी अन्धकार विनाश के लिये थी। इसीलिए अन्तिम समय में भी अनायास भान हो आया। जिसे उन्होंने तेज और अन्धकार का भाव है इस रूप में व्यक्त किया। इस प्रकार महर्षि के इस वाक्य का अर्थ लोगों ने अपने-अपने विचार से भिन्न-भिन्न किया। उपर्युक्त सभी दृष्टिकोण बाह्य जीवन को मुख्य मानकर बनाये गये हैं। किन्तु महर्षि के जीवन का अध्ययन आन्तरिक दृष्टिकोण से ही ठीक हो सकता है। बिना उनकी आन्तरिक अवस्था समझे महर्षि को समझने का प्रयास व्यर्थ ही है। मेरे विचार से महर्षि के इस दिव्य वाक्य का अर्थ इस प्रकार से है- जैसे ज्वरग्रस्त रोगी को ज्वर समाप्त होने वाले दिन अधिक वेग से ज्वर आता है, उसी प्रकार यह प्रकृति का महर्षि पर आक्रमण था। अनादि काल से अथवा आरम्भ सृष्टि से चित्त जीवात्मा का सहयोगी आज्ञाकारी सेवक बना हुआ था। किन्तु आज इनके सम्मिलन का अंतिम दिन था। अब वह

परस्पर 36 हजार बार सृष्टि बनने तक परस्पर सम्बन्धित न हो सकेंगे। मानो चित्त पूर्ण वेग के साथ सम्पूर्ण संस्कारों को आत्मा सम्मुख उपस्थित कर रहा है। किन्तु वह ज्ञानाग्नि से दग्ध होकर निर्जीव हो जाते हैं। आज यह अन्तिम अन्तर्द्वन्द्व था। इसलिए आन्तरिक चित्त के अन्तिम आक्रमण को देखकर महर्षि ने तेज और अन्धकार का प्रयोग किया। अन्त में तेज की विजय हुई, और महर्षि कृतकृत्य हो गये। इस प्रकार उन्होंने तेज और अन्धकार का भाव है इन शब्दों से अपनी आन्तरिक स्थिति का वर्णन किया।

महर्षि का तृतीय मौन उपदेश

मृत्यु समय से कुछ पूर्व महर्षि ने एक आदेश यह दिया था कि जो लोग हमारे साथ हैं अथवा दूरस्थ स्थानों से आये हैं वे सब मेरे पीछे आ जायें। जिसे सुनकर तत्रस्थ सब लोग उनके पीछे की ओर खड़े हो गये थे। किन्तु इसका अभिप्राय इतना ही नहीं था। वह तो, यावच्चन्द्रदिवाकरो की स्थिति तक के लिए आदेश दे रहे थे। और इस आदेश के सूक्ष्मता में यह रहस्य छिपा हुआ था कि मेरे शरीर त्याग के बाद तुम मेरे पीछे रहना। मेरे सिद्धान्तों का प्रचार करना और मिलकर रहना। ऋषि का यह आदेश आज हमारे लिए विशेष ध्यान देने योग्य है। वास्तव में आज हम उनके पीछे नहीं रहे। प्रत्येक क्षेत्र में हमारे साथ महर्षि के दृष्टिकोण का अभाव है। शिक्षा को ही लीजिये। कितने आर्य ऐसी निष्ठा रखते हैं जो अपनी संतान को निष्कारणषडङ्ग वेदों के विद्वान् बनाना चाहते हों। यही अवस्था सर्वत्र है। इस आदेश की उपेक्षा से ही हमारे समाज का तेज क्षीण होता जा रहा है। भगवान् हमें सच्चे अर्थों में महर्षि का अनुयायी बनने का सामर्थ्य प्रदान करे।

महर्षि का चतुर्थ मौन आदेश

स्वामी जी महाराज ने आर्यों के लिए एक आदेश यह भी दिया था कि ''सब खिड़की दरवाजे खोल दो'' जिसे सुनकर लोगों ने उस भवन के सब खिड़की, दरवाजे तथा छत के रोशनदान खोल दिये थे। परन्तु यह तो उन की आज्ञा का स्थूल रूप से ही पालन करना कहा जा सकता है। यह वाक्य स्थूल अर्थ के साथ एक सूक्ष्म अर्थ की ओर भी संकेत कर रहा है। अर्थात् महाभारत काल से आर्यों ने अपने हृदयों को संकीर्ण बना लिया है। जिसके कारण भारत के करोड़ों पुत्र अछूतों के रूप में ईसाई, मुसलमानों की भेंट चढ़ रहे हैं। आर्य (हिन्दू) उन्हें घृणा की दृष्टि से देखते हैं। परन्तु अब समय संभलने का आ गया है। अतः अपने हृदय के कपाट खोलकर सबको छाती से लगाने की आवश्यकता है। अपनी संकीर्ण मनोवृत्ति त्यागकर उदार वृत्ति अपना लेनी चाहिए। इस आदेश से आर्यसमाज ने मुसलमानों की शुद्धि का मार्ग प्रशस्त किया, लाखों भारतीय संस्कृति से कटे हुए लोगों को पुनः आर्य धर्म की दीक्षा दी। अतः हमें आचार्य के इस उदार दृष्टिकोण को अब भी सदैव अपनाये रहना चाहिए।

महर्षि का पाचवां मौन आदेश

दीपावली के दिन महर्षि का मुख-मण्डल अति दीप्त दिखाई दे रहा था। वे समाधि लगाए ईश्वर मग्न थे। अनायास ही महाराज ने आँखें खोलीं। चारों ओर गम्भीर दृष्टि से एक बार देखा। इस समय का दृष्य अपूर्व था। महाराज के मुख-मण्डल पर अनुपम छवि विराज रही थी। जिस प्रकार किसी प्रियतम से मिलने के लिए मनुष्य का हृदय उद्वेल्लित हो उठता है, उसी प्रकार ऋषि का अंग-प्रत्यंग पुलकित हो रहा था। वियोग-मृत्यु-भयानकता-दुःख चिन्ता घबराहट आदि के कोई लक्षण नहीं थे। इसके विपरीत वहाँ तो ब्रह्मचर्य पूर्वक आजीवन घोर तप से अर्जित पुण्य का फल मिल रहा था। जन्म-जन्म की आज साधना पूरी हो गई। माया का अन्त हो गया, योग-दर्शन में वर्णित सातों अवस्था उपस्थित हो गईं। अतः ऋषि अत्यधिक आनन्द विभोर थे। इस दृष्य ने लोगों को आश्चर्य में डाल दिया। उन्होंने प्राण छोड़ते समय मनुष्य को तड़पने, हाय-हाय करते हुए ही देखा था, प्राण कैसे छोड़ने चाहिएँ यह पाठ तो वे प्रथम बार ही अपने आचार्य से पढ़ रहे थे। इधर पंडित गुरुदत्त जैसे तार्किक अपनी नास्तिकता को छोड़कर अतीव श्रद्धा से अपने गुरु से आस्तिकता की मौन दीक्षा ग्रहण कर रहे थे। गुरुदत्त के लिए यह दृष्य क्रियात्मक उपदेश सिद्ध हुआ। अब तो जीवन की धारा ही बदल गई। महर्षि ने सहसा कहना आरम्भ किया- हे दयामय सर्वशक्तिमान ईश्वर तेरी इच्छा यही है, तेरी यही इच्छा है, तेरी इच्छा पूर्ण हो। आहा!!! तूने अच्छी लीला की।'' यह शब्द भी ऋषि के विशेष स्थिति के द्योतक हैं। ईश्वर प्राणिधान का यह उत्कृष्टतम उदाहरण है। महर्षि ब्रह्म में स्थित होने से वे ब्रह्म की इच्छा का ही मानो पालन कर रहे थे। उन्हें सब संसार ब्रह्म में डूबा हुआ दीख रहा था और वे स्वयं आनन्द मग्न थे। इस स्थिति का वर्णन वे किन शब्दों में करते। अतः उनके मुख से अनायास ही यह शब्द निकल पड़े- आहा!!! तूने अच्छी लीला की, तेरी इच्छा पूर्ण हो। इतना कह प्राण बाहर निकाल स्वयं ब्रह्मस्थ हो गये।

विस्मृत महर्षि दयानन्द

– महात्मा चैतन्यमुनि

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी इस धरा पर जिस समय अवतरित हुए उस समय चारों ओर पाखण्ड और आडम्बर फैला हुआ था। लोग धर्म के स्वरूप को भूल चुके थे, एक परमात्मा के स्थान पर पत्थरों और व्यक्तियों की पूजा हो रही थी। आर्यों के आलस्य और प्रमाद के कारण वेद का पढ़ना–पढ़ाना तथा सुनना–सुनाना लुप्त हो गया था। मातृशक्ति को पढ़ने–पढ़ाने का अधिकार नहीं था। छुआछूत का कोढ़ समाज को जर्जर कर रहा था। भारत मां परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़ी हुई थी। हिन्दू लोग धड़ाधड़ विधर्मी बनकर राष्ट्र–भक्ति से विमुख हो रहे थे। मृतप्राय समाज एवं राष्ट्र को संजीवनी पीलाने वाला कोई नहीं था। इन समस्त बुराईयों से लड़ना तो दूर रहा इन्हें समूल नष्ट करने की कल्पना तक करने वाला भी कोई नहीं था। ऐसे विकट समय में महर्षि जी ने समूल सुधार का बीड़ा उठाकर अनुपम साहस का परिचय दिया। गुरु विरजानन्द जी को अपना समूचा जीवन समर्पित करने के बाद उन्होंने स्थान–स्थान पर जाकर शास्त्रार्थ किए अनेकों प्रवचन दिए तथा व्यक्तिगत रूप से भेंटे करके अनेक लोगों का पथ–प्रदर्शन किया। यही नहीं उन्होंने सत्यार्थ–प्रकाश, संस्कार–विधि, आर्याभिविनय, गोकरूणानिधि, ऋग्वेदादिभाष्य–भूमिका, व्यवहारभानु आर्योद्देश्य–रत्नमाला, पंचमहायज्ञ विधि आदि अनेक अद्भुत ग्रन्थों की रचना की।

टंकारा की धरती को त्यागते समय उनके दो ही सपने थे सच्चे शिव को प्राप्त करना तथा मृत्युजंयी बनना। इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उन्होंने घोर तपस्या करके योग की अनेकों सिद्धियां प्राप्त की मगर वे इतने लोकेषणा रहित थे कि अपनी यौगिक सिद्धियों का कहीं पर भी किसी प्रकार का प्रदर्शन आदि नहीं किया। वे आदित्य ब्रह्मचारी थे। उनके ब्रह्मचर्य बल का लोगों ने कई बार प्रत्यक्ष साक्षात्कार किया। संसार में और भी अनेकों ब्रह्मचारी हुए मगर हनुमान जी ने श्रीराम की सेवा करने के लिए ब्रह्मचर्य का व्रत धारण किया। परशुराम ने इक्कीस बार क्षत्रियों का संहार करने के लिए, भीष्म ने अपने पिता की तुच्छ कामना को पूरा करने के लिए ब्रह्मचर्य का व्रत धारण किया मगर महर्षि जी ने अपने गुरु की आज्ञा मानकर संसार के उपकार के लिए यह व्रत धारण करके आर्ष ग्रन्थों के प्रचार–प्रसार तथा समाज और राष्ट्र–सेवा के लिए अपना समूचा जीवन आहुत कर दिया। उन्हें जीवन में एक क्षण के लिए भी कामवासना उद्वेलित नहीं कर पाई वे सत्यवादी थे। उनके जीवन में कितनी ही बार कितने ही प्रलोभन आए मगर वे कभी भी असत्य के पक्षधर नहीं बनें। प्रभु भक्त होने के कारण उनमें अद्भुत सहनशक्ति तथा निर्भीकता थी, वे दयालुता तथा परोपकार की साक्षात् मूर्ति थे। मानव तो मानव उनसे किसी पशु का दर्द भी नहीं देखा जाता था। जीवन भर अपने साथ अपकार करने वालों को सदा क्षमा ही करते रहे। यहां तक कि अन्त में जिस जगन्नाथ नामक व्यक्ति ने जहर दिया, संसार से प्रयाण करने से पूर्व उसे भी अपने पास से धन देकर नेपाल की ओर भाग जाने की प्रेरणा दी ताकि वह पकड़ा न जा सके। वे सच्चे समाज सुधारक थे। उन्हीं की प्रेरणा से महिलाओं के लिए विद्या ग्रहण करने के दरवाजे खुले। वे ही अछूतों को उनके अधिकार व सम्मान दिलाने वाले थे। उन्होंने सतीप्रथा तथा बालविवाह और बलिप्रथा आदि कुप्रथाओं का प्रबल विरोध किया तथा विधवा विवाह का समर्थन किया। पाखण्ड और आडम्बरों को जड़–मूल से उखाड़ने के लिए उन्होंने स्वयं को पूर्णतः झोंक दिया। वे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने धर्म को आचरण के साथ जोड़ने की बात कहीं अन्यथा धर्म मात्र बाहरी पहरावे और चिन्ह आदि धारण करने तक ही सीमित हो गया था। उन्होंने जिस सामाजिक सुधार का मार्ग प्रशस्त किया था, उसे आगे बढ़ाने के लिए उनके शिष्यों ने अपने आपको आहुत कर दिया तथा पण्डित लेखराम, स्वामी दर्शनानन्द, पण्डित गुरूदत्त आदि अन्य अनेक मनीषियों ने अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया। महर्षि जी ने प्राचीनतम शिक्षा पद्धति के जो सूत्र प्रस्तुत किए थे उन्हें कार्यान्वित करने के लिए स्वामी श्रद्धानन्द तथा महात्मा हंसराज आदि ने सहर्ष अपने आप को होम कर दिया। आर्य समाज का ऐसा स्वर्णयुग आया कि इस संस्था ने चारों ओर अपने कार्यो की धूम मचा दी तथा आर्यसमाज व आर्यो के नाम एक आदर्श के रूप में लिए जाने लगे।

उन्होंने लोगों को पुनः परमात्मा के ज्ञान अर्थात् वेदों की ओर लौटने का न केवल आह्वान किया बल्कि अपने प्रबल तर्कों और प्रमाणों के आधार पर वेदों को परमात्मा द्वारा दिया गया ज्ञान भी सिद्ध किया। वेद के नाम पर जो कुछ भी अनर्गल व अप्रासंगिक हो रहा था, अपने वेद–भाष्य के द्वारा उन सब आक्षेपों का निराकरण कर दिया। निरूक्त के आधार पर वेदों का पारमार्थिक और व्यवहारिक पक्ष रखकर वेद के सम्बन्ध में प्रचलित समस्त भ्रान्तियों को दूर करने का ऐतिहासिक कार्य किया। यह सिद्ध करके बता दिया कि वेद में बहुदेवता वाद, लौकिक इतिहास तथा अप्रासांगिक एवं अनित्य विनियोग वाद नहीं है। अज्ञानी लोगों को बताया कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है इसलिए उनका अर्थ परमात्मा के गुण–कर्म–स्वभाव के विपरीत नहीं किया जाना चाहिए, वह सृष्टि–नियम के विरुद्ध नहीं होना चाहिए, वह मानव उन्नति में सहयोगी होना चाहिए, वह अनुकूल, तर्कानुमोदित, बुद्धिसंगत होना चाहिए। उन्होंने वेदों को समझने की जो आंख दी उससे वेद निन्दक भी वेदों को गडरियों के गीत कहना छोड़कर प्राचीनतम ग्रन्थ, समस्त ज्ञान–विज्ञान का पुस्तक तथा ईश्वरीय ज्ञान कहने को बाधित हुए। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में घोषणा की कि वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। इस सम्बन्ध में प्रसिद्ध क्रान्तिकारी अरविन्द घोष जी ने कहा–'वेदों के रहस्यों को खोलने की सही कुंजी यदि किसी के पास थी तो वह केवल दयानन्द के पास थी..... वेदों में विज्ञान की ऐसी बातें भी हैं जिनका पता आज के वैज्ञानिकों को नहीं..... दयानन्द ने वेदों में निहित ज्ञान के विषय में अत्युक्ति नहीं बल्कि अल्पोक्ति से काम लिया है.'

महर्षि जी में राष्ट्र–भक्ति कूट–कूट कर भरी हुई थी। अठराह सौ सत्तावन को प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम में उन्होंने अपनी सक्रिय भूमिका निभाई थी इस बात के आज कितने ही प्रमाण मिल रहे हैं। कुछ कारणों से वह क्रान्ति सफल नहीं हो सकी मगर वे उससे निरूत्साहित नहीं हुए बल्कि उन कारणों को खोजा जिनके कारण वह असफलता मिली थी और उन कारणों को दूर करने के लिए कृत–संकल्प हो गए। वे निर्भीक शब्दों में स्वतन्त्रता की मांग करने वाले प्रथम व्यक्ति थे। उन्होंने ही सर्वप्रथम अपने ग्रन्थ सत्यार्थ–प्रकाश में स्वराज्य की बात कही, अनेक ग्रन्थों में विदेशी राज्य के समूल नाश की कामनाएँ की तथा अंग्रेज अधिकारी के मुंह पर ही स्पष्ट शब्दों में कह दिया कि मैं तो परमात्मा से रात–दिन यह प्रार्थना करता हूँ कि मेरे राष्ट्र को विदेशी राज्य से शीघ्र मुक्ति मिले। सभी समाज सुधारकों तथा अग्रणी नेताओं ने इस बात को स्वीकारा है कि स्वतन्त्रता के प्रथम प्रणेता तथा राष्ट्रीय चेतना के अग्रदूत महर्षि दयानन्द जी ही थे। यह बात अक्षरशः सत्य है कि यदि उन्होंने अपने देश वासियों को स्वराज्य प्राप्त करने की प्रेरणा न दी होती तथा आर्य समाज की स्थापना न की होती तो भारत पन्द्रह अगस्त, १९४७ को स्वतन्त्र न हो पाता। आर्य समाज एक ऐसी क्रान्ति बनकर उभरा कि आर्य समाजी होने का अर्थ ही होता था– क्रान्तिकारी। बाल गंगाधर तिलक जी के शब्द है कि स्वतन्त्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है यह प्रेरणा उन्हें सत्यार्थ–प्रकाश से मिली। जिन लाला लाजपत राय ने स्वतन्त्रता के लिए स्वयं को आहुत कर दिया उनके शब्द है– 'आर्य समाज मेरी धर्म की मां और महर्षि दयानन्द मेरे धर्म पिता हैं।' उनकी शहीदी पर जिन क्रान्तिकारियों ने इस हत्या का बदला लेने की प्रतिज्ञा की तथा उस जालिम को मौत के घाट उतारा जिसने लाला जी पर लाठियाँ बरसाई थीं, उनमें भगतसिंह प्रमुख थे। भगत सिंह जी का पूरा परिवार सरदार अर्जुन सिंह, किशन सिंह, अजीत सिंह आदि महर्षि जी की राष्ट्रवादी विचारधारा के कारण ही क्रान्तिकारी बना था। अनेक क्रान्तिकारियों के प्रेरणा स्रोत पण्डित रामप्रसाद बिस्मिल जी अपनी आत्मकथा में लिखते है कि सत्यार्थ–प्रकाश ने ही उन्हें क्रान्तिकारी बनाया। चन्द्रशेखर आजाद आपके ग्रन्थ आर्याभिविनय का जब तक पाठ नहीं कर लेता था वह प्रातराश नहीं करते थे। यही नहीं बल्कि उन्हीं के परम शिष्य पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्मा ने विदेश जाकर 'भारत–भवन' की स्थापना की थी जहां वीर सावरकर, मदल लाल ढींगरा, लाला हरदयाल आदि इनके शिष्य बनें तथा विदेश में भी क्रान्ति की ज्वाला को प्रज्ज्वलित रखा। भाई परमानन्द तथा भाई बालमुकुन्द आदि अन्य अनेकों क्रान्तिकारियों का प्रेरणा–स्रोत भी आर्य समाज ही था। उन्होंने स्वयं बोध प्राप्त करके संसार को परमात्म–बोध दिया। आत्म–बोध, मानव–बोध, समाज–बोध, वेद–बोध, कर्म–बोध, धर्म–बोध, शिक्षा–बोध, साहित्य–बोध, भाषा–बोध, अर्थ–बोध, विज्ञान–बोध तथा राष्ट्र–बोध दिया। श्री अरविन्द जी ने इसीलिए पहाड़ों की चोटियों से तुलना करते हुए महर्षि जी को सर्वोच्च शिखर की उपमा दी है। वास्तविकता यह है कि उनकी किसी से तुलना ही नहीं की जा सकती है क्योंकि वे अतुलनीय है.....

महर्षि जी ने अपनी विद्वता या योग का प्रदर्शन नहीं किया, न ही किसी नए मत या सम्प्रदाय की स्थापना की, न कोई नया गुरुमन्त्र ही दिया और न ही किसी नई पूजा पद्धति का विधान किया। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कि मेरा कोई भी नया मत या सम्प्रदाय स्थापित करने की कोई इच्छा नहीं है और न ही मैंने अपनी ओर से कोई बात कही है बल्कि ब्रह्मा से लेकर जैमिनी मुनि तक ऋषि–मुनियों ने वेदानुसार जिन मान्यताओं को माना है उसी को लोगों के सामने रखा है क्योंकि अपने आलस्य, प्रमाद तथा एषणाओं के कारण लोग उन मान्यताओं को भूल चुके थे। हालांकि उनकी इच्छा किसी नई संस्था की स्थापना करने की भी नहीं थी मगर लोगों के आग्रह पर 'आर्य समाज' की स्थापना की और संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य बताया अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना तथा इस उन्नति का आधार वेदों को ही माना। उन्होंने आर्य समाज के जो दस नियम बनाए वे संसार के इतिहास में अद्वितीय ही नहीं बल्कि अनुपम भी है। उन नियमों के रहते कोई भी इस संस्था पर उंगली नहीं उठा सकता है। उप–नियमों के रूप में संस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए ऐसे सूत्र दिए जिनका अक्षरशः अनुपालन करने से आर्य समाज कभी भी अधोगति को प्राप्त नहीं हो सकता। यही कारण है कि जब तक चरित्र को प्रमुखता दी गई तथा नियमों और उपनियमों का भली प्रकार से कार्यान्वयन होता रहा, आर्य समाज ने अभ्युदय के व्योम् को छू लिया मगर आज स्थिति कुछ विपरीत है। हालांकि आज भी बहुत से आर्य समाजी ऐसे है जो पूर्णरूप से महर्षि जी के मन्तव्यों को सकारता देने में लगे हुए है मगर इस सत्य को भी स्वीकारना होगा कि आज अधिकतम समाजों में महर्षि जी के नियमों–उपनियमों का अनुपालन नहीं हो रहा है। इस समाज का सदस्य बनने के लिए जिस सदाचार को आधार बनाया गया था। आज उसका कोई महत्व नहीं रहा है, साधारण सदस्यों और सभासदों के लिए जो नियम बनाए गए थे, उन्हें मानने वाला नहीं रहा, उपस्थिति रजिस्टर का प्रयोग या तो किया ही नहीं जाता और यदि किया जाता है तो केवल अपने गुट को शक्तिशाली बनाने के लिए, शतांश देने की बात कोई भी मानने के लिए तैयार नहीं। आश्चर्य तो यह है कि ऐसे आचारहीन तथा नियम–उपनियमों का उल्लंघन करने वाले लोग ही अपने आप को सच्चे आर्य कहने लगे है तथा जो महर्षि जी के सदाचार एवं नियम–उपनियमों की बात करता है उसे बाहर का रास्ता दिखा दिया जाता है। उस विशुद्ध आर्य को परे हटाने के लिए ये तथाकथित आर्य संगठित हो जाते हैं। इस का दुष्परिणाम यह हुआ कि बहुत सी सभाओं, आर्य समाजों तथा उससे सम्बन्धित अन्य संस्थाओं तथा सम्पतियों पर गैर आर्यो का अधिपत्य हो गया है..... वोट की राजनीति के अन्तर्गत या 'सबको जोड़कर चलो' के नाम पर बड़े–बड़े अनुशासनहीनों असत्यवादियों तथा घपला करने वालों का पक्ष लेने वाले तो बहुमत में मिल जायेंगे मगर सत्य और सदाचारी का साथ देने वाला कोई विरला ही बचा है। इससे सच्चे आर्य अन्ततः उपराम होते जा रहे है क्योंकि आचारहीन, आध्यात्मिकशून्य, मूर्ख व्यक्ति तथा आर्य समाजों के मन्तव्यों से पूर्णतया अनभिज्ञ व्यक्तियों द्वारा कब तक अपमानित हुआ जा सकता है..... उनके उपराम होने से स्वार्थी तथा पद्लोलुप व्यक्ति प्रसन्न ही होते हैं शर्मिन्दा नहीं। इस प्रक्रिया के चलते बहुत सी सभाओं या आर्य समाजों पर दुराचारी, असत्यवादी तथा अपनी–अपनी एषणाओं को परितृप्त करने वाले अनार्यो का अधिपत्य होता जा रहा है..... जिसके कारण महर्षि जी द्वारा चलाई गई प्रचार–प्रसार की प्रक्रियाएँ शिथिल तथा दिशाहीन हुई है.... भले ही दिख रहा हो कि हम बढ़ रहे है। हम कार्य कर रहे है मगर ऐसे लोग संभवतः नींव से हटकर बनाए गए भवन का हश्र नहीं जानते हैं या अपने–अपने स्वार्थो की पट्टी बान्धने के कारण जानना नहीं चाहते हैं। ऐसे स्वार्थी लोगों का तो कुछ बिगड़ने वाला नहीं है मगर महर्षि दयानन्द जी को विस्मृत करने के कारण आर्य समाज की गरिमा पर ठेस पहुँची है तथा अन्ततः हम ऐसे पतन के मार्ग पर चल पड़े हैं जिसका अन्त केवल और केवल विनाश है.....

यह लघु लेख न तो किसी व्यक्ति विशेष, न किसी विशेष सभा या आर्य समाज को लक्ष्य लेकर लिखा गया है बल्कि इसका लक्ष्य है कि हम महर्षि दयानन्द जी के अनुयायी आत्मान्वेषण तथा आत्मावलोकन करें कि महर्षि जी की क्या भावना थी और आज हम कहां आकर पहुँचे हैं। जहाँ तक महर्षि दयानन्द जी तथा आर्य समाज की उत्कृष्ट एवं सार्वभौमिक विचारधारा का प्रश्न है, आज यह विचारधारा अधिक प्रासांगिक है मगर देखना है कि हम प्रासांगिक रहे है या कि नहीं। कब तक हम आत्मावलोकन किए बिना इस प्रकार से रसातल को जाते रहेंगे..... एक समय वह भी था जब अंग्रेजी राज्य में आर्य समाजी की बात को प्रमाणिक माना जाता था मगर आज हम कहां खड़े हैं..... आर्य समाज में कराए गए विवाह को न्यायालय में भी प्रमाण माना जाता था मगर आज उस पर भी क्यों उंगलियाँ उठने लगी है.... क्यों? अपनी अकर्मण्यता, सिद्धान्तहीनता तथा आपसी तालमेल और सौहार्द के अभाव के कारण ही आज समाज व देश के लिए आदर्श बनना तो दूर रहा, हमारे पूर्व मनीषियों ने समाज व देश के लिए जो कुर्बानियाँ की हैं, देश व समाज के लए जो सर्वाधिक काम किया है, राजनेताओं तथा भावी पीढ़ी में उसे दर्ज कराने तक में हम अक्षम हो गए है.... क्या इस पर चिन्तन करना अनिवार्य नहीं है? हमारा यह मानना है कि यदि महर्षि दयानन्द जी के आदेशों का अक्षरशः पालन किया जाए, गैर आर्य समाजियों की भीड़ बढ़ाने के स्थान पर सत्यवादी, सच्चरित्र एवं सिद्धान्तवादी लोगों को प्रश्रय दिया जाए, नियम–उपनियमों का दृढ़ता के साथ अनुपालन किया जाए तो आज भी हम अपने उस पुरातन गौरव को प्राप्त कर सकते हैं अन्यथा अन्य और कोई मार्ग नहीं है। कथनी और करनी जब तक एक नहीं होगी तब तक औरों की बात तो दूर रही ऐसे लोग अपने परिवार तक को भी आर्य समाजी नहीं बना पाते हैं मगर इसके विपरीत यदि स्वयं मन, वचन और कर्म से सिद्धान्तवादी बनेंगे तो इससे ही अपने परिवार और समाज के अन्य लोग भी आर्य समाज की ओर आकर्षित होंगे। इसी से हमारा संगठन शक्तिशाली बनेगा तथा हम सही अर्थो में राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपना वर्चस्व स्थापित कर सकेंगे। यहां हम यह बात भी करना चाहते है कि आज भी संसार में आर्य समाज जैसी उत्कृष्ट संस्था और कोई नहीं है और न ही आर्य समाज में सिद्धान्तवादियों का अकाल है। आज भी महर्षि दयानन्द जी के बहुत से दीवानें समर्पित होकर अपने–अपने ढंग से कार्य कर रहे हैं..... वे किसी एषणा के कारण नहीं बल्कि महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के ऋण से उऋण होने के लिए तथा प्राणीमात्र के कल्याण की भावना और अपने जीवन को सार्थकता देने के लिए रात–दिन चुपचाप कार्यरत हैं..... उनके मानस पटल से महर्षि जी का महान व्यक्तित्व तथा उनके सिद्धान्त एक पल भर के लिए भी विस्मृत नहीं होते हैं तभी तो वे आज भी महर्षि जी द्वारा रखी गई नींव पर विशाल भवन बनाने के सपने को साकार करने में अनवरत् लगे हैं। महर्षि दयानन्द जी को विस्मृत करके चलना व्यक्ति, आर्य समाज, समूचे समाज तथा राष्ट्र और विश्व के लिए आत्मघाती कदम होगा इसलिए बोधोत्सव पर सर्वप्रथम उस महर्षि को ही आत्मसात् करें.....

वैदिक वशिष्ठ आश्रम (महर्षि दयानन्द धाम),
महादेव, तहसील सुन्दर नगर, मण्डी (हि०प्र०)

!!ओ३म्!!

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी

का

200वाँ

1824 - 2024

जन्म जयन्ती वर्ष

स्वामी इन्द्रवेश

आर्य समाज के महान नेता, त्यागी-तपस्वी संन्यासी, युवाओं के प्रेरणा स्रोत
स्वामी इन्द्रवेश जी महाराज के 86वें जन्मोत्सव के अवसर पर

16वाँ बेटी बचाओ चतुर्वेद पारायण महायज्ञ

दिनांक : 01 मार्च, 2023 (बुधवार) से 12 मार्च, 2023 (रविवार) तक

स्थान : स्वामी इन्द्रवेश विद्यापीठ (आश्रम), ग्राम-टिटौली, जिला-रोहतक (हरि.)

समय : प्रतिदिन प्रातः 8 से 11 बजे तक, सायं 3 से 6 बजे तक

अध्यक्षता
स्वामी आर्यवेश जी
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली-110002

ब्रह्मा
स्वामी वेद प्रकाश सरस्वती जी
नूरपुर, हिमाचल प्रदेश

मुख्य आकर्षण

यज्ञशाला का लोकार्पण
चतुर्वेद पारायण महायज्ञ
महिला दिवस पर विशेष कार्यक्रम
महर्षि दयानन्द जन्मोत्सव समारोह
स्वामी इन्द्रवेश जयंती समारोह
विचार गोष्ठियों का आयोजन
कार्यकर्ता सम्मान समारोह

संकल्प

इस महायज्ञ में समाज के प्रतिष्ठित प्रतिनिधि, डॉक्टर, वकील, शिक्षाविद् जन प्रतिनिधि, धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक नेता एवं हजारों स्त्री-पुरुष, छात्र एवं छात्राएँ आहुति देकर कन्या भ्रूण हत्या, नशाखोरी एवं पाखण्ड के विरुद्ध संकल्प लेंगे।

विशेष : महायज्ञ में उच्चकोटि के संन्यासी, विद्वानों एवं भजनोपदेशकों द्वारा कार्यक्रम निरन्तर चलता रहेगा। यजमान बनने के इच्छुक महानुभाव अभी से अपनी सूचना देकर कृतार्थ करें। आप सभी महायज्ञ में आहुति डालकर राष्ट्र के नव-निर्माण में अपनी भूमिका निभाएं।

आयोजक

महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वितीय जन्म शताब्दी आयोजन समिति

सहयोगी : स्वामी इन्द्रवेश फाउण्डेशन, युवा निर्माण अभियान, सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्

कार्यालय : स्वामी इन्द्रवेश विद्यापीठ (आश्रम), ग्राम-टिटौली, जिला-रोहतक (हरि.)

सम्पर्क : 9416630916, 9354840454, 9466430772

ऋषि दयानन्द के विचारों का संसार पर प्रभाव

- श्री पं० शान्ति प्रकाश जी, शास्त्रार्थ महारथी

संसार के मतमतान्तरों पर ऋषि दयानन्द के विचारों का प्रभाव अतिद्रुतगति से पड़ता चला गया। सभी बड़े सम्प्रदायों के सहस्रों नरनारी वैदिक धर्म के झण्डे के नीचे आर्यसमाज में शामिल होते चले गये। पौराणिक, इस्लाम, ईसाईयत, जैन, बौद्ध मत के विद्वानों में खलबली मच गई। पं० मदन मोहन मालवीय ने पुराणों के संशोधन की घोषणा की। कुछ स्वार्थी लोगों ने इसका विरोध किया। पुनरपि पौराणिकों पर अन्दर–अन्दर प्रभाव बढ़ता चला गया।

(१) बाल विवाह निषिद्ध घोषित हुआ।

(२) बाल विधवाओं के पुनर्विवाह का प्रचलन हुआ।

(३) जन्मगत जाति–पांति बन्धन ढीले पड़ गए।

(४) भिन्न–भिन्न पौराणिक विद्वानों ने अपने ग्रन्थों के संशोधन प्रस्तुत किये।

(५) पतितों की शुद्धि के चक्र को चलाने की काशी के विद्वानों की घोषणा हुई।

(६) जिन्न–भूतादि भ्रम जाल का खंडन हुआ।

(७) समुद्र यात्राएँ प्रचलित हुई।

(८) मूर्ति की पूजा के अर्थ बदले गये और कई विद्वानों ने मूर्तियाँ गंगादि में बहा दी।

(९) कंठी–माला–तिलकादि से पाप क्षमा के सिद्धान्त की तिलांजलि।

(१०) स्त्री–शिक्षा का सामूहिक स्वीकरणादि अनेकविध सुधार हुए।

(११) पादरी स्टोक्स को सनातन धर्म मन्दिर शिमला में शुद्ध करके उनका नाम सत्यानन्द रखा गया।

(१२) मरदान सीमा प्रान्त की लड़की गौरी पठानों ने उठा ली थी। उसकी वापसी के लिए सारे हिन्दु समाज ने पूर्ण शक्ति लगा दी। गौरी के वापस आने पर सभी ने प्रसन्नता प्रकट की और भारत भर से भेंट भेजी गई।

(१३) हिन्दु समाज ने कबर पूजा बन्द करने के लिए सखी सर सरवर आदि जाना बन्द कर दिया।

(१४) पंजाब के सहस्रों मुस्लिम परिवार शुद्ध होकर समाज में मिला लिये।

(१५) पाकिस्तान विभाजन के समय सहस्रों देवियों को हिन्दु परिवारों में बसा लिया गया।

(१६) आगरा के मलकाने और हरयाणा के मूले मुस्लिम मत छोड़कर हिन्दु समाज का अंग बन गए।

(१७) गीता प्रेस गोरखपुर ने अपनी एक पुस्तक द्वारा हिन्दुओं को आर्य घोषित किया।

(१८) ईसाई मुसलमानों के साथ शास्त्रार्थ करते हुए पौराणिक पंडितों ने वेदों के अर्थ महर्षि दयानन्द के किये हुए उपस्थित करके वैदिक धर्म के गौरव की रक्षा की।

(१९) हिन्दुओं ने अपनी रक्षा के लिये भिन्न–भिन्न अवसरों पर आर्य समाज को पुकारा। हैदराबाद का सत्याग्रह भी इसका उदाहरण है।

(२०) काशी विद्वत्परिषत् के पूर्व प्रधान श्रीयुत पं० गोपाल शास्त्री ने सायण और महीधर के भाष्यों का सार्वजनिक रूप से खंडन करके ऋषि दयानन्द के भाष्य की भूरि–भूरि प्रशंसा की और अपनी पुस्तक भारतीय संस्कृति में लिखा है कि :–

''यों ही सैकड़ों दृष्टान्त शास्त्रों में भरे पड़े हैं। पर आज इन संस्कारों के बिलकुल विपरीत देखने में आता है। पुत्र के लिये पिता जब तक ईश्वर के रूप में समक्ष विद्यमान है उसकी आज्ञा मानना, उसकी सेवा करना यही परमेश्वर पूजन है। फिर वह क्यों तीर्थों में देवता ढूंढता–फिरता है? यूं ही विद्यार्थी के लिए तो पुस्तक रूप में सरस्वती देवी और गुरु रूप में ईश्वर तो उसके सामने ही विद्यमान हैं, तो क्यों वह उसका अपमान कर मन्दिरों में दौड़ता–फिरता है? इसी प्रकार स्त्री के लिये जब उसका पति, उसके बाल–बच्चे परमेश्वर रूप में विद्यमान ही हैं तो वह क्यों सुबह के दस बजे तक मन्दिर में अक्षत–फूल–पानी फैंकती–फिरती है? स्त्री और शूद्रों के लिए तो धर्म शास्त्र कहते हैं कि–

जपस्तपस्तीर्थयात्रा, प्रव्रज्या, मंत्रसाधनम्।
देवताराधनंचैव स्त्री शूद्र पतनानिषट्।।

ऐसी स्थिति में स्त्री और शूद्रों का मन्दिरों के पीछे पड़े रहना यह कितना अँधेर है। इसको शीघ्र बन्द करना चाहिए।

यहाँ तो मुकदमा जीतने, नौकरी, लड़का–लड़की पाने, ऊँचे पद पाने, परीक्षा पास करने इत्यादि सांसारिक सभी इच्छाओं के लिए मन्दिरों में जल–फूल और पैसे फैंके जाते हैं। इसी से आज भारत में सब देवों की ही नहीं, मनुष्यों की भी मूर्तियाँ मन्दिरों में पिघरा कर तरह–तरह की बन्दिश करके मूर्ख हिन्दुओं, स्त्रियों और शूद्रों को ठगना धर्म हो गया है। आज स्वतन्त्र भारत में इस कुकृत्य का निवारण अवश्य होना चाहिये। इसका नियन्त्रण हम सनातन धर्मावलम्बी ही कर सकते हैं। यह हम लोग धर्म नहीं कर रहे हैं। पाप ही कर रहे हैं। प्राचीन स्वतन्त्र भारत में यह पाप, छल, कपट, दम्भ नहीं था। अतः अब पुनः भारत के स्वतन्त्र होने पर पराधीनता कालीन यह पाखण्ड बिलकुल बन्द करना चाहिये।

घर में खाना नहीं है। पोष्य वर्ग भूखों मर रहा है। पर हमारा सनातन धर्मी किसान कर्ज लेकर ग्रहण में काशी, मगर और कुम्भ में प्रयाग, हरद्वार उज्जैन या नासिक अवश्य जायेगा। यह धर्म नहीं, धर्माभास है। अतः हमें स्पष्ट कहना पड़ता है, आज हिन्दू समाज इन बातों से जर्जरित हो रहा है।''

(भारतीय संस्कृति, पृष्ठ–४५,४६)

पुनः इसी पुस्तक में लिखा है कि–

''मेलों में गुन्डों, बदमाशों को कुकृत्य के लिये मौका मिलता है। इन मेलों की दुर्दशा अवर्णनीय है। यहां बीमारी फैलती है। हैजा होता है। कुछ मरते हैं। कुछ भागकर गाँव में, देहात में बीमारी ले जाते हैं। यूँ सारे देश में तहलका मच जाता है। ठीक ही है। पाप का फल तो रोग, शोक, परिताप होता ही है। ऐसे ही हमारे समाज में धर्म के नाम पर अधर्म फैल रहा है। इनका जड़ मूल से विनाश होना चाहिए। तब भारतीय संस्कृति का विशद स्वरूप दीख पड़ेगा। .. इनकी मूर्ति बनाकर उस पर फूल, पानी, पैसे फैंकना यह तो भूसी काटना है। जो मन्त्र शक्ति है उसकी सिद्धि जप से होगी। जो दैव शक्ति है उसकी प्रसन्नता शास्त्रोक्त अनुष्ठानादि उपायों से होगी। भगवत गीता की मूर्ति बनाकर उसकी पूजा कोटि जन्म करने वाला, क्या गीता से कुछ लाभ पायेगा? क्या भारत की मूर्ति बनाकर पूजने से भारत स्वतन्त्र हुआ है? शास्त्रों में तो कहा है कि काष्ठ पाषाण में तो मूर्खों के देवता रहते हैं परतन्त्रता के युग में यह धर्माभास बढ़ गया था, अब तो इसे रोकना ही चाहिए।'' (भारतीय संस्कृति, पृष्ठ ४७)

अयोध्या के एक विद्वान् पंडित ने एक पुस्तक प्रकाशित की है जिसमें लिखा है कि–

रामेश्वर में मन्दिर मालावार के एक राजा रामचन्द्र ने बनवाया था। त्रेता के राम का शिवलिंग स्थापन के साथ कोई सम्बन्ध नहीं। यह पुस्तक मेरे पास भी है।

पं० माधवाचार्य ने पुराण दिग्दर्शन नामक पुस्तक में आर्य समाज और ऋषि दयानन्द की अनेक मान्यताओं को ठीक स्वीकार कर लिया है। पुराणों में प्रक्षेप की भरमार को स्वीकार कर लिया है तथा मन्त्रों की यौगिक प्रक्रिया की पुष्टि करते हुये लिखा है कि–

(क) भग=भ (वृद्धि), ग (प्राप्त होने वाली वस्तु)। –पृष्ठ ३७८

(ख) तस्ययोनिम्। योनि=मूल कारण=प्रकृति। –पृष्ठ ३७८

(ग) इन्द्रंमित्रं वरुणं=इन्द्रमित्र वरुणादि जिसके नाम हैं वह एक अद्वितीय परमात्मा है।–पृष्ठ ३८२

(घ) वसिष्ठ=जो अपने को वश में रखे। –पृष्ठ ३६५

(ङ) प्राणाः ऋषयः। –पृष्ठ ३६६

पौराणिकों में सनातन धर्म कन्या पाठशालाओं की शाखा भारत भर में खुलती जा रही हैं जबकि ऋषि दयानन्द से पूर्व स्त्री शिक्षा का विरोध था।

पौराणिक विद्वानों के घरों में कुंवारी बीस–बीस वर्ष की कन्याएँ बैठी हैं। ऋषि से पूर्व वह कन्या का विवाह छोटी आयु में न करने पर नरक में जाना मानते थे।

पं० माधवाचार्य ने अपनी पुस्तकों में आर्य तथा आर्य जाति आदि शब्द अनेक बार लिखे हैं। पौराणिक विद्वान् अब तुलसी रामायण के दोहों से यज्ञों का खण्डन करके वेद मन्त्रों से यज्ञ करने का समर्थन करने लगे हैं। नवीन अवतारों का खण्डन भी पौराणिक विद्वान् करने लगे हैं।

सत्य यह है कि पुराण विष संयुक्त अन्नवत् त्याज्य हैं। जब तक पौराणिक विद्वद्मण्डल समूचे वैदिक धर्म का समर्थन करके महर्षि दयानन्द के मार्ग को नहीं अपनाता तब तक आर्य जाति का भला सम्भव नहीं। परमात्मा विद्वानों में सत्य धर्म स्वीकरण का साहस प्रदान करें जिससे नयी पुरानी धार्मिक बुराइयों की रोकथाम की जा सके।

इस्लाम का संशोधन

ऋषि दयानन्द के तप, त्यागमय जीवन तथा वैदिक सिद्धान्तों का प्रभाव इस्लाम पर कम नहीं पड़ा। उनके समर्थन और विरोध में जितने भी मुसलमान आए, उन्होंने ऋषि के कितने ही सिद्धान्त प्रगट अथवा अप्रगट रूप से स्वीकार कर लिए।

(१, २) सर सय्यद अहमद खाँ ऋषि के सम्पर्क में बहुत आए। ऋषि दयानन्द इनको वैदिक धर्म में दीक्षित करना चाहते थे किन्तु वह ऋषि सिद्धान्तों के समर्थक होते हुए भी बड़ा साहसिक पग नहीं उठा सके। हाजी रहमतुल्लाह तो वैदिक धर्म को स्वीकार करके आर्य बन गए और संसार के प्रथम आर्य समाज बम्बई की बागडोर बहुत कुछ उनके हाथ में थी। उन्होंने आर्य समाज के भवन निर्माणार्थ पाँच सहस्र मुद्रा दान में दी थी। वह उच्चकोटि के सिद्धान्त मर्मज्ञ आर्य थे। किन्तु सर सय्यद अहमद ने आर्य समाज में शामिल न होकर मुसलिम सुधार के लिये ऋषि के वैदिक विचारों का सहारा लिया और कुरआन शरीफ का ऐसा भाष्य संसार के सम्मुख उपस्थित करने का यत्न किया जो यथासम्भव वेदानुकूल हो। जिस पर मुसलिम विद्वानों ने सय्यद अहमद को काफिर घोषित किया। सय्यद अहमद खान नहीं डगमगाए। मौलाना अलताफ हुसैन हाली पानीपती के अनुसार इसका ब्यौरा निम्न है :–

''यद्यपि मौलवी विद्वानों का यत्न सर सय्यद के विरुद्ध काफिर और मुरतिद होने की व्यवस्था प्राप्त करने में सीमातीत हो गया था। दिल्ली, रामपुर, अमरोहा, मुरादाबाद, बरेली, लखनऊ, भोपाल और अन्य स्थानों के साठ विद्वानों, मौलवियों और लेखकों के दिये हुए कुफ्र के फतवों पर मोहरें और हस्ताक्षर किये थे। मानो कि भारत के समस्त व्यवस्था दाताओं और कौम के नेताओं का मतैक्य हो गया था। केवल खुदा की ओर से इसकी स्वीकृति और समर्थन कराना शेष रह गया था। सो मौलवी अली बख्श खान ने यह कमी पूरी कर दी। सम्भवतः उन्होंने इस प्रयोजन से अल्लाह के घर (मक्का) के हज्ज पर जाने का निश्चय किया और प्रतिष्ठित मक्का नगर में जाकर चारों इमामों के सम्मुख दो प्रश्नावलियाँ अरबी भाषा में उपस्थित कीं। इनमें से एक का अनुवाद यह है कि :–

''आप क्या फरमाते है उस व्यक्ति के बारे में जो शैतान की बाहरी सत्ता को स्वीकार नहीं करता और कहता है कि उसका अभिप्राय पाशविक शक्ति है, जो मनुष्य में है। फरिश्तों का आदम को सिजदा करना वास्तविक न था किन्तु उससे वचनबद्ध होना अभिप्रेत है। और ''अबा वस्तकबरा'' अर्थात् इन्कार किया और अभिमान किया– इन शब्दों का अभिप्राय पाशविक शक्ति का अनुसरण न करना है जो मनुष्य को भ्रमित कर देती है जो वास्तविक नहीं। और सिजदा से इन्कार करता है और कहता है कि आसमान कोई दृश्य वस्तु नहीं किन्तु उनका अभिप्राय आकाश अथवा सप्त प्रकाशमान लोकों से है। और कहता है कि लौंडी गुलाम बनाकर रखना हराम हो गया है। कहता है कि मेराज (खुदा के पास ऊपर जाना) यह केवल स्वप्न था और आँहजरत स्वलल्लाहो व सल्लमा का सशरीर खुदा के पास जाने से इन्कार करता है और आंहजरत के सीना को चीर कर पवित्र करने की घटना से भी इन्कार करता है। अतः ऐसे व्यक्ति के सम्बन्ध में क्या आज्ञा है।''

इस व्यवस्था को पूछने के बारे में चारों मतों के चारों व्यवस्था देने वालों ने जो पवित्र मक्का में रहते हैं पृथक्–पृथक् शब्द लिखे हैं। इन चारों व्यवस्था दाताओं की व्यवस्थाओं का संक्षेप यह है कि:–

''यह व्यक्ति (सय्यद अहमदखान) पथभ्रष्ट और भ्रामक है किन्तु वह फटकारे हुए लानती शैतान का खलीफा है जो मुसलमानों को फिसलाने (पथभ्रष्ट करने) का विचार रखता है। इसका फितना यहूदियों और ईसाईयों के फितने से भी बढ़कर है। खुदा इससे निपटे। उचित है कि सशक्त लोग इससे बदला लें और उसको सचेत करना चाहिए। यदि मूर्ख हो तो समझाना चाहिए। पुनः हठ छोड़ दें तो अच्छा है अन्यथा मारने और कैद आदि से उसको समझाना चाहिए नहीं तो खुदा उससे निपटेगा।'' (हयाते जावेद, भाग २, पृ० ३४४)

वस्तुतः सय्यद अहमद ने ऋषि के सिद्धान्तों को खुलकर कुरानशरीफ के भाष्य में लिखा, कुरान के अर्थ परिवर्तित किये जिसे सर्वसाधारण सहन नहीं कर सके और सय्यद अहमद के विरोध में मौलवियों ने मुसलिम जनता को भड़का दिया।

सय्यद अहमद ने १८७७ के अपने व्याख्यान में हिन्दू–मुसलमानों की जातीयता के विषय में एक आर्यजाति होने का जयघोष किया किन्तु अंग्रेज सरकार घबरा गई और सय्यद अहमद को मनाने का यत्न किया। सय्यद अहमद के नाम से अलीगढ़ मुसलिम यूनिवर्सिटी भी स्थापित कर दी गई। यह अंग्रेज का बहुत बड़ा घात था। सय्यद अहमद इसमें फँस गए तब उन्होंने घोषित किया कि हम मुसलिम लोग आर्य जाति से पृथक् कौम हैं। किन्तु कुरान शरीफ के अपने भाष्य पर वह दृढ़ता से डटे रहे। मुसलमान जिसे काफिर कहते थे आज उनको मुक्तिदाता समझा जाता है क्योंकि सय्यद अहमद कुरान शरीफ के भाष्य में तर्क संगत विचार प्रवाह न भरते तो पठित मुसलमानों का प्रवाह आर्य समाज की ओर था जो भारत में इस्लाम की समाप्ति का कारण बन सकता था।

(३) पंजाब की जनता पर ऋषि के सिद्धान्तों का सबसे अधिक प्रभाव पड़ा जिस पर बहुत से सिक्ख आर्य समाज के सहायक हो गए, कुछ आर्य बन भी गए।

मुसलमानों का पठित भाग आर्य समाज की ओर तीव्रता से झुकने लगा। मौलवी अब्दुलगफर गाजी महमूद धर्मपाल बन गया जिसने आर्यसमाज का नेता बनकर पंजाब के आर्यों में नवजीवन का संचार कर दिया। धर्मपाल ने 'तर्के इस्लाम' नामी पुस्तक का प्रकाशन करके इस्लामिक विद्वानों में इस्लाम के विरुद्ध खलबली मचा दी। गुजरात जिला के दो मुसलमान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रचारक बनकर ऋषि सिद्धान्तों का प्रचार करने लगे।

दुनियापुर के एक मुसलमान ने बहावलपुर में आर्य समाज की स्थापना कर दी तथा करोड़ लाल ईसन और बस्ती गुजरात के दो मुसलमान आर्य उपसभा के उपदेशक बन गए।

जब जिला गुरदासपुर के राजपूत मुसलमानों का एक सम्मेलन आर्य समाज में सामूहिक रूप से शामिल हो जाने के लिये हुआ तो अंग्रेज सरकार घबरा गई उसे भारत की एकता में अपना विदेशी राज्य समाप्त होता हुआ दिखाई दिया कि सैकड़ों मुसलमान आर्य बनते चले जा रहे हैं। तब अंग्रेज सरकार ने गुरदासपुर जिला के मिर्जा गुलाम अहमद कादयानी को बहुत–सा धन देकर आर्य समाज

पिछले पृष्ठ का शेष

ऋषि दयानन्द के विचारों का संसार पर प्रभाव

के विरुद्ध पुस्तकें लिखवाने और भ्रम फैलाने शुरू कर दिये। उत्तर प्रदेश के कई मुसलमान आर्य बने। देहरादून के मुहम्मद उमर ने अपना नाम अलखधारी रखवाया और ऋषि दयानन्द के हाथों उसने वैदिक धर्म को स्वीकार किया। अंग्रेजों ने उत्तर प्रदेश के मुसलमानों को आर्य बनने से रोकने के लिए देवबन्द जिला सहारनपुर में मौलवी कासिम अली साहिब के द्वारा एक बहुत बड़ी मजहबी संस्था स्थापित कराई गई। इस संस्था और अलीगढ़ विश्वविद्यालय ने भारत के मुसलमानों को आर्य विचारों से दूर रखने का बहुत–बहुत यत्न किया। पुनरपि शास्त्रार्थ युग में मौलवियों को शास्त्रार्थों में कुरान शरीफ के अर्थ में परिवर्तित करके अपना बचाव करना पड़ा। इस पर भी आज भारत और पाकिस्तान के सैकड़ों और हजारों मुसलमान आर्य विचारों के प्रशंसक विद्यमान हैं।

(४) मिर्जा गुलाम अहमद कादयानी के मन पर शहीदे अकबर पं० लेखराम जी आर्य पथिक के बलिदान तथा उससे पूर्व पं० जी की प्रार्थना का इतना प्रभाव पड़ा कि मिर्जा जी ने अपने मरने से चार दिन पूर्व वैदिक धर्म को पूर्ण ईश्वरीय धर्म स्वीकार कर लिया और घोषित किया कि वेद ईश्वर का पूर्ण ज्ञान है। उन्हीं के शब्दों में पुस्तक में पढ़िये:–

(क) ''हम अहमदी सदैव वेद को ईश्वरीय मानेंगे। वेद और उसके ऋषियों का नाम प्रतिष्ठा और प्रेम–पूर्वक लेंगे। –पृ० ३०

(ख) इस आधार पर हम वेद को ईश्वरीय मानते हैं और उसके ऋषियों को महापुरुष तथा पवित्र मानते हैं। –पृ० २७

(ग) तो भी ईश्वरीय शिक्षानुसार हमारा यह दृढ़ विश्वास है कि वेद मनुष्य कृत नहीं मानव कृत ग्रन्थ में यह शक्ति नहीं होती कि संसार को अपनी ओर खींच ले और एक नष्ट न होने वाला सनातन क्रम स्थिर रखें। पृ० २७

(घ) हम इन कठिनाईयों के रहते भी ईश्वर से डर कर वेद को ईश्वरीय वाणी जानते हैं और जो कुछ उसकी शिक्षा में भूलें हैं वह वेद के भाष्यकारों की भूलें हैं। –पृ० २६

(ङ) मैं वेद को इस बात से पवित्र समझता हूँ कि उसने कभी अपने किसी पृष्ठ पर ऐसी शिक्षा प्रकाशित की हो जो न केवल बुद्धि विरुद्ध हो किन्तु परमेश्वर के पवित्र स्वरूप पर पक्षपात का दोष लगाती हो।

(च) हमारे लिए वेद की सत्यता की यही एक युक्ति पर्याप्त है कि आर्यवर्त के कोटिशः मनुष्य सहस्रों वर्षों से इसको ईश्वरीय वाणी जानते हैं और सम्भव नहीं कि यह मान किसी ऐसे वचन को दी जाए जो किसी झूठे मनुष्य का हो। –पृ० २६

(छ) किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि श्री कृष्ण जी अपने समय का नबी और अवतार था ईश्वर को प्राप्त कर चुका था। –पृ० १४

(ज) सो आसमानों और जमीन के मालिक ने चाहा कि लेखराम सत्य के प्रकाशनार्थ बलिदान हो और सत्य धर्म की सत्यता प्रगट करने के लिए बलिदान हो जाए। सो वही हुआ जो ईश्वर ने कहा। सिराजेमनीर। –पृ० २६

(झ) नरक सदैव के लिये नहीं। चश्माए मसीही। –पृ० २६–३०

(ञ) यह हम नहीं कहते कि जीवात्मा अभाव से उत्पन्न होता है। चश्माए मारफत। –पृ० १५२

(ट) अब से तलवार से जिहाद (धर्म युद्ध) की समाप्ति है। गवर्नमेंट अंग्रेजी और जिहाद–पृ० १४।

(ठ) अन्त में मैं एक अन्य रोमा लिखता हूँ ..... मैं एक ऐसे स्थान पर बैठा हूँ जहाँ चारों ओर वन हैं जिनमें बैल, गधे, कुत्ते, सूअर, भेड़िये, ऊँट आदि प्रत्येक प्रकार के पशु विद्यमान हैं और मेरे मन में डाला गया कि यह सब मनुष्य हैं जो दुष्कर्मों से इन योनियों में हैं।

नजूलुल्मसीह –पृ० ३७

(ड) अहमदियों को पाकिस्तान में कई बार लूटा मारा गया है और उन पर दोष लगाया गया है कि यह काफिरों के विचार रखते हैं। ऊपर के इन विचारों के कारण जो मैंने उनकी पुस्तकों के प्रमाण दिये हैं। अहमदियों को भारत में रहकर वैदिक धर्म में शामिल हो जाना चाहिए थां तब इन पर कोई हाथ न उठा पाता। निश्चय है कि लाखों मुसलमान जो पढ़े–लिखे थे ऋषि दयानन्द के विचारों से प्रभावित होकर भी हिन्दुओं की जाति–पाँति के बन्धन से बाधित होकर अहमदी बने और न आर्य, न मुसलिम की नीति अपनाकर पृथक् मत का प्रस्थापन किया जो आर्य समाज और इस्लाम का मध्यवर्ती है।

(५) मौलवी हाफिजअताउल्लाह बरेलवी वर्तमान राजस्थान ने कई पुस्तकें वैदिक सिद्धान्तों के पक्ष में लिखी हैं। इस्लाम का पहला पाठ नामी पुस्तक में वह लिखते हैं कि :–

''हिन्दू भी ईश्वरीय ज्ञान से युक्त हैं। इसमें बहुत ही युक्तियाँ और प्रमाणों के साथ यह सिद्ध कर दिया है कि वह इब्राहीमी पुस्तकें जो संसार के आरम्भ में ईश्वर की ओर से प्रगट हुई थी वह ब्रह्मा जी के चार वेद हैं। यदि नहीं तो मौलवी लोग और पादरी दोनों बतावें कि बाईबिल और कुरान में जिस इब्राहीम के इमाम होने का वर्णन है उसकी पुस्तकें कहाँ हैं? स्मरण रहे कि हजरत इब्राहीम की इमामत से यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि वेद मुकद्दस सबसे पहिली आस्मानी पुस्तक है क्योंकि कोष में इमाम का अर्थ 'सबसे पहिले' और आगे वाले हैं। अतः जो पुस्तक धार्मिक संसार के ईमाम पर प्रगट हुई निश्चित सबसे प्रथम पुस्तक है।

स्मरण रहे कि कुरान का इब्राहीम, बाईबिल का इब्राम और वेद का ब्रह्मा तीनों एक ही नबी के नाम हैं। ..... वेद मुकद्दस संसार की रक्षा के लिये सबसे पहला इलहाम और आधारशिला है।

– पृष्ठ ३४–३५

(६) इसी हाफिज अताउल्लास साहिब ने अपनी पुस्तक ''आवागमन'' में मुसलमानों से प्रश्न किया है कि यदि आवागमन (पुनर्जन्म) का सिद्धान्त ठीक नहीं तो मैं जन्मान्ध क्यों उत्पन्न हुआ हूँ? अतः ईश्वर के पक्षपाती न होने के कारण पुनर्जन्म का सिद्धान्त ठीक है।

(७) राजस्थान के बशीर अहमद जी वेद के चुने हुए मन्त्रों का अपनी कविता में अनुवाद कर रहे हैं। वेदों पर उनकी बड़ी आस्था है।

(८) जोधपुर के फैजुल्लाखान के उद्यान में जिसमें एक अच्छा भवन बना हुआ है वहाँ ऋषि दयानन्द ठहरे थे। अब वह भवन आर्यसमाज को मिल चुका है इसकी घोषणा राजस्थान के मुख्यमन्त्री बरकतउल्ला खान ने अलवर शताब्दी में की थी।

(९) मौलाना–ए–फारूक और श्री काजमी ने वेद और कुरान नामी पुस्तक में पूर्ण ईश्वरीय ज्ञान घोषित करते हुए माना है कि वेद आरम्भ सृष्टि से अब तक सुरक्षित हैं।

(१०) मीरजा गुलाम अहमद के सुपुत्र मियांमहमूद जब कादयानी अहमदियों के खलीफा थे उन्होंने ख्वाजा हसन निजामी के पत्र 'निजामुल्मशएख' में लिखा था कि–

''मैंने वेदों पर दृष्टि डाली और उनमें कई ऐसे शानदार उच्च विचार देखे, ऐसे पवित्र हीरे–मोती ज्ञात हुए कि मेरे मन ने स्वीकार किया कि इनके ऋषि–मुनि ईश्वर से प्राप्त करके ही यह ज्ञान दे सकते थे ..... वेदों में ईश्वर मिलन के जलवे दीख रहे थे।

(११) मिर्जा अहमद सुलतान ने अपनी एक पुस्तक 'वाएजुल्मुसलेमीन', अध्याय दो, सन् १९३५ में लिखा है कि :–

''प्रतिष्ठित उच्च और पवित्र ग्रन्थों का नाम वेद मुकद्दस है जिसकी चार जिल्दें ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्व वेद हैं। वेदमुकद्दस को ईश्वरीय पुस्तक न मानना पक्षपात और अविद्या के अतिरिक्त अन्य कोई कारण नहीं। उचित है कि वेद मुकद्दस और उसके ऋषि–महर्षियों में ईमान लाईये। चतुर्थ मुनाकशा।

(१२) कई मुसलमान मेरे साथ शास्त्रार्थ करते हुए ही प्रभावित होकर वैदिक धर्म के प्रचारक बन गए। जैसे मुहम्मद शफीक साहिब, मौलवी शेर अहमद, पं० मेधातिथि आदि।

पं० मेधातिथि पाकिस्तान बनने से पूर्व पठानकोट के समीप अरबी पाठशाला में पढ़ाते थे। बटाला के शास्त्रार्थ में वैदिक धर्म स्वीकार करके मेध तिथि नाम से प्रसिद्ध होकर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब में उपदेशक बने। कन्या गुरुकुल हाथरस की एक स्नातिका से इनका विवाह हुआ था। अब वह ईश्वर को प्यारे हो चुके हैं। उनकी धर्म पत्नी और कन्या मध्य प्रदेश में रहती हैं।

(१३) १९४७ ईस्वी के फसादों में अनेकानेक लड़कियाँ हिन्दु घरों में बस गईं।

(१४) कई मुसलमान विद्वान आर्यसमाज में शामिल होकर अच्छे प्रतिष्ठित पदों पर कार्य करते रहे और अब तक भी कई जीवित हैं, जिनकी आर्यों में बड़ी प्रतिष्ठा है। उनके विवाहादि में कोई रुकावट नहीं आई।

(१५) आर्य समाज जन्म जाति–पांति के प्रभाव को सर्वथा नष्ट कर दे तो आज भी सहस्रों उच्च घरानों के मुसलमान वैदिक धर्म में प्रविष्ट होने को समुद्यत हैं। परमात्मा करे कि बिछड़ों का भरत मिलाप शीघ्र हो।

ऋषि-विचारों का ईसाईयत पर प्रभाव

ईसाईयों ने बाईबिल के शब्दों और सिद्धान्तों में आर्यों के शास्त्रार्थों के प्रभाव के कारण बड़े–बड़े परिवर्तन किये हैं।

वाच टावर बाईबिल ऐंड ट्रेक्ट सोसाएटी इन्टर नेशनल बाईबिल स्टूडैंट्स एसोसिएशन बरोकलन, न्यूयार्क यू० एस० ए० की ओर से ''खुदा सच्चा ठहरे'' नामी पुस्तक १९४६ ईस्वी में अंग्रेजी में, १९५४ ईस्वी में उर्दू आदि में प्रकाशित किया।

पहली एडीशन एक करोड़ तीन सहस्र सजिल्द पुस्तकें तीस भाषाओं में छपी थीं। एक अप्रैल १९५२ में इसको दोहराया गया।

अंग्रेजी में दूसरी एडीशन दस लाख सजिल्द पुस्तकें छापीं।

इस पुस्तक के पृष्ठ ११० पर त्रिनेटी के तीन खुदाओं के सिद्धान्त को मानने से इन्कार करते हुए इसे इञ्जील में प्रक्षिप्त घोषित किया गया।

''तीन हैं जो आसमान में गवाही देते हैं अर्थात् पिता, पुत्र, पवित्रात्मा और यह तीनों एक हैं''

योहन, अध्याय ५, आयत ७

(१) बरोकलिन (अमरीका) के इस नूतन सम्प्रदाय ने योहन की इस आयात को प्रक्षिप्त मानकर ईसाई तसलीस के सिद्धान्त की समाप्ति कर दी है।

(२) लाखों ईसाईयों ने मसीह के कुंवारी से उत्पन्न होने के सिद्धान्त को मानने से इन्कार कर दिया है। कुंआरेपन का खंडन किया है।

(३) अमरीका के प्रसिद्ध ईसाई श्री स्टोकस महोदय सत्यार्थ प्रकाश को पढ़कर वैदिक धर्म के प्रचारक बन गए हैं। वह गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार में कुछ समय रहकर वेद मंत्र बोलने का अभ्यास कर चुके हैं और अब सन्यस्त होकर अमरीका में आर्यसमाज के प्रचारक बन चुके हैं।

मैंने भारत में भी एक अमरीकन आर्य प्रचारक को देखा। वह सितार पर अच्छे भजन बोलता और आर्यसमाज का प्रचार करता है।

बर्लिन आर्य समाज में एक जर्मन प्रोफेसर ने अपने व्याख्यान में लूथर और दयानन्द का मुकाबला करते हुए कहा था कि:–

(१) लूथर गृहस्थ और दयानन्द का अखंड ब्रह्मचर्य था।

(२) ऋषि दयानन्द के तप का मुकाबला लूथर से नहीं हो सकता।

(३) ऋषि दयानन्द का धर्म सम्बन्धी ज्ञान अथाह था।

(४) ऋषि दयानन्द योग विद्या निष्णात थे।

(५) ऋषि दयानन्द ने भ्रमजाल पर कुठाराघात किया जब कि लूथर केवल पोप की हुंडी का खंडन कर सके।

(६) ऋषि दयानन्द ने वेद के बन्द स्रोत संसार के कल्याण के लिये खोल दिये और भ्रम में डालने वाले ग्रन्थों का प्रबल युक्ति प्रमाण पूर्वक खंडन करने में सफलता प्राप्त की। लूथर बाईबिल के भ्रमजाल से पीछा न छुड़ा सके इत्यादि।

(७) भारत में ईसाईयों के साथ शास्त्रार्थों में सर्वत्र विजय प्राप्त हुई। कितने ही पादरी तथा ईसाई आर्यसमाज में मिल चुके हैं।

बुद्ध और जैन पर प्रभाव

बुद्धों और जैनियों पर भी ऋषि दयानन्द के विचारों का प्रभाव पड़ा है। बुद्धों के पत्र सन्त सुधा में श्री ईश्वर दत्त जी मेधार्थी स्वयं को आर्य कहते हैं।

आर्य बुद्ध संघ बुद्धपुरी के कुलगुरु श्री ज्ञान क्षेत्र जी की कुछ स्वर्ण पंक्तियाँ सन्त सुधामई १९५० के अंक में लिखी गई हैं। वह निम्न प्रकार से हैं :–

''ब्रह्म, अमृतपद, दुर्लभनाथ आदि शब्द एकार्थ वाची हैं। यहाँ बुद्धपुरी में कई भिक्षु ''ओ३म्'' शब्द के विरोधी हैं किन्तु आपको ''ओ३म्'' शब्द का परित्याग नहीं करना चाहिए। सब कुछ ओम् में है, बुद्ध भगवान् भी ओम् में हैं।'' सन्तसुधा मई ५०, पृ० १६

सन्तसुधा के सम्पादक श्री ईश्वरदत्त जी मेधार्थी एम० ए० एल० आई० अणुभिक्षु बुद्धपुरी कानपुर ने संतसुधा के बुद्ध जयन्ती अंक में ''सन्त सिद्धार्थ'' के शीर्षक लेख में लिखा है कि –

ब्रह्म के विषय में भगवान् बुद्ध ने स्वयं कहा है कि –

ब्रह्मभूतोऽतितुलो मारसेनस्य मर्दनः।
सर्व मित्रो वशी कृत्वा मोदामि अकुतोभयः।।

मैं अब ब्रह्मपद को प्राप्त कर चुका हूँ। मेरी तुलना अब किसी से नहीं। मैंने काम देव की सेना को मर्दितकर दिया है, मैं काम क्रोधादि सब अन्तः शत्रुओं को वश में करके निर्भय हुआ मस्त हो रहा हूँ।''

जो स्वयं ब्रह्म में बिहार करता हुआ ब्रह्मचारी हो, ब्रह्मभूत हो, वह ब्रह्म को न माने? यह कैसे हो सकता है? बुद्ध ने स्वयं कहा है कि मैं नास्तिकपन को विनाशोन्मुख समझता हूँ।

महात्मा बुद्ध आर्य थे
नतेनार्यो भवति येन प्राणिनो हिनस्ति।
अहिंसया सर्व प्राणिनामार्येति प्रोच्यते।।

धम्मपद, श्लोक २७०, धम्म वग्गो १५

जो प्राणियों का हनन करता है। वह आर्य नहीं होता सभी प्राणियों की हिंसा न करने से उसे आर्य कहा जाता है।

सन्त सुधा, कानपुर मई ५०, पृ० १०–११

गौतम बुद्ध का वेदाध्ययन

ललित विस्तार नामक महात्मा बुद्ध के जीवन चरित्र में लिखा है कि–

वह ब्रह्मचारी गुरु के घर रहने लगा तदनुकूल आज्ञा पालन, भोजनाछादन का स्वीकरण किया। सायं प्रातः यज्ञ संध्यादि नियमानुष्ठान करता हुआ वेदों को पढ़ने लगा।

सुतनिपात में लिखा है कि :–

सुन्दरिक भारद्वाज में कथा आती है कि सुन्दरिक भारद्वाज जब यज्ञ समाप्त कर चुका तो वह किसी श्रेष्ठ ब्राह्मण को यज्ञ शेष देना चाहता था। उसने सन्यासी गौतम बुद्ध को देखा और जाति पूछी तो बुद्ध ने कहा कि जाति नहीं पूछनी चाहिए, मैं ब्राह्मण हूँ। उसको सत्य का उपदेश देते हुए महात्मा बुद्ध ने कहा कि–

यदन्तज्ञो वेदज्ञो यज्ञकाले यस्याहूतिर्लभेत।
तस्य यज्ञ इति ब्रवोमि।।

सुतनिपात श्लोक, ४५६

सुन्दरक भारद्वाज ने गद्गद् होकर कहाकि मेरा यज्ञ सफल हो गया जिसे आप जैसे वेदज्ञ महापुरुष के दर्शन हो गए अन्यथा मेरे यज्ञ शेष को कोई सामान्य व्यक्ति खाता।

इसी सुतनिपात ग्रन्थ में वेदों का महत्व बताते हुए लिखा है कि :–

(१) विद्वाँश्च वेदैः समेत्य धर्म गच्छति भूरिप्रज्ञः।
बुद्धिमान् वेदों से धर्म का निश्चय करता है।

सुतनिपात श्लोक, ७६२

(२) यो वेदज्ञो ध्यानरतः स्मृतिमान् संबोध प्राप्तः शरणं बहूनाम्।
कालेनतहि हव्यं प्रवेशयेत् यो ब्राह्मणः पुण्यप्रेक्षी यजेत।।

सुतनिपात श्लोक, ५०३

जो वेदज्ञाता ध्यानरत बुद्धिमान, बहुतों का शरणदाता हो समय पर उसको ही भोजन खिलावे जो विद्वान् पुण्यमय जीवन वाला हो।

संक्षेपतः कई आधुनिक बुद्ध विद्वान महात्मा बुद्ध को वैदिक धर्मी आस्तिक आर्य घोषित कर रहे हैं।

जैनमत पर प्रभाव

(१) श्री आत्मा राम जी महाराज प्रसिद्ध जैन विद्वान की प्रतिष्ठा जैन समाज में बहुत है। इनको श्री मद–विजयानन्द सूरीश्वर कहा जाता है। इन्होंने अपने ग्रन्थ जैनतत्वादर्श उत्तरार्द्ध एकादश परिच्छेद, पृ० ३८६ पर सृष्टि के आदि में चार आर्यों ने वेदों को लिखा है।

(२) उपाध्याय अमर चन्द जी महाराज श्री महावीर साहित्य मंडल फरीदकोट की एक पुस्तक महामंत्र नवकार अक्टूबर १९४१ में प्रकाशित हुई। जिसमें लिखा है कि :–

ऊँ का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। ओं का शब्द अतीव पवित्र, आध्यात्मिकता पूर्ण, पाप वृत्तियों का नष्ट करने वाला है। जैनाचार्यों ने कहा कि :–

ओंकार विन्दुसंयुक्त नित्यंध्यायन्ति योगिनः।
कामदं मोक्षदं चैव ओंकाराय नमो नमः।।

महामन्त्र, नवकार पृ० १६

पुनश्च;

''ओंकार की महिमा इससे ही मालूम हो जाती है कि सब कार्यों में प्रथम ओंकार का ही स्मरण किया जाता है। कहीं लिखना हो, कहीं पढ़ना हो, कहीं आना हो, कहीं नया कार्य करना हो, सब कहीं ओं का ही गौरव देखने में आता है।'' महामन्त्र नवकार पृ० २१

(३) बहुत से जैन आर्य धर्म को स्वीकार कर चुके हैं। और उनकी वैदिक धर्म पर दृढ़ आस्था है।

महर्षि दयानन्द और विश्व शान्ति

- श्री आर्यभिक्षु, आर्य वानप्रस्थ आश्रम, ज्वालापुर

महर्षि जैमिनी के पश्चात् ऋषि परम्परा में स्वामी दयानन्द सरस्वती प्रथम महापुरुष हैं, जिन्होंने शाश्वत सनातन तथा सार्वभौम मानव–धर्म वेद धर्म की दुहाई ही नहीं दी, अपितु उसके लोप होने के परिणाम स्वरूप उत्पन्न संसार के समस्त मत, तन्त्र तथा सम्प्रदायों की विधिवत् समीक्षा की (सत्यार्थप्रकाश ११ से १४ वें समुल्लास तक)। वह स्वयं स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश में लिखते हैं 'ब्रह्मा से लेकर जैमिनी पर्यन्त ऋषि–मुनियों द्वारा अनुमोदित और प्रतिपादित सनातनधर्म ही हमारा धर्म है। इसे मानना व मनवाना अपना अभीष्ट है। किन्तु कोई भी नूतन मत, पन्थ अथवा सम्प्रदाय चलाने की किञ्चित्मात्र भी इच्छा नहीं है।' ऐसा लिखने में उनका हेतु उनके शब्दों में स्पष्ट है। 'सर्व सत्य का प्रचार कर सबको एक मत में करा, द्वेष छुड़ा परस्पर में दृढ़ प्रीतियुक्त कराके सब को सुख लाभ पहुँचाने के लिए मेरा प्रयत्न और अभिप्राय है।'' इस कथन में उनके हृदय में विश्व–शान्ति के लिए एक ठोस रचनात्मक पुरोगम की स्पष्ट आभा मिलती है।

संसार में अशान्ति के हेतु दो ही मौलिक हेतु हो सकते हैं। प्रथम भोग सामग्री की वितरण व्यवस्था और द्वितीय, भोक्ता का भोग के साथ सम्बन्ध। प्रथम स्थिति का समाधान सामाजिक क्रान्ति तथा राजनैतिक उथल–पुथल से होता रहता है। द्वितीय के लिये स्थान, समय तथा परिस्थिति के आधार पर पुरुष विशेष द्वारा उपस्थित विचार तथा विधि कार्य करते हैं। पहले के विस्तार स्वरूप राजतन्त्र से लेकर लोक तन्त्र तक की व्यवस्थाओं का प्रादुर्भाव हुआ और दूसरे के विस्तार स्वरूप मत, ग्रन्थ तथा सम्प्रदाय के रूप में पारसी, ईसाई, मुसलमान, बौद्ध, जैन इत्यादि आचार पद्धतियों का प्रादुर्भाव हुआ। (जिन्दावस्ता, बाइबिल, कुरान, धम्मपद, त्रिपिटक)। इन्हीं दोनों पाटों के बीच विश्व की शान्ति पिसती रही और आज अपने शिखर पर पहुँच चुकी है। विश्व में अशान्ति के मूल कारणों में दो प्रमुख हैं। राजनीतिक मान्यताओं की रस्सा–कसी और मत–मतान्तरों की संख्या वृद्धि में होड़ की प्रवृत्ति। विश्व के इतिहास में जारशाही और उसका दुःखद अन्त एक ओर है, तो ईसाई मत की ही दो शाखाओं, कैथलिक और प्रोटेस्टेन्ट के मध्य की रक्त–रंजित बीभत्स गाथाएँ दूसरी ओर है। इस प्रकार जब दोनों ओर की स्थिति अत्यन्त भयावह तथा विनाशकारी स्वरूप में विद्यमान थीं तब इस धरा–धाम पर बाल–ब्रह्मचारी, युगपुरुष, क्रान्ति–द्रष्टा भगवान् दयानन्द का प्रादुर्भाव आर्यावर्त की पवित्र ऋषि भूमि में सम्पूर्ण अविद्या तथा अज्ञान का नाश करके विश्व–शान्ति स्थापनार्थ उन्नीसवीं सदी के मध्य में हुआ।

महर्षि दयानन्द दया का था सागर,
जगत की व्यथा का दवा बनने आया।
तिमिर छा रहा था अविद्या का घर-घर,
गगन में दिवाकर नया बनके आया।।

महर्षि ने इस व्यापक अविद्या, अज्ञान तथा सत्य का भेद न करते हुए सिंहनाद किया, ''मेरा अपना मन्तव्य वही है जो सबको तीन काल में एक–सा मानने योग्य है। मेरी कोई अपनी नवीन कल्पना नहीं है, अपितु जो सत्य है उसे मानना और मनवाना और जो असत्य है उसे छोड़ना और छुड़वाना अपना अभीष्ट है।'' इसी सत्य के प्रकाशन संदर्भ में उन्होंने विश्व के समस्त नागरिकों के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय राजनैतिक जय घोष दिया– **'अपने देश में अपना राज्य'।** इस प्रकार संसार के समस्त पराधीन राष्ट्रों को एक नूतन चेतना तथा स्फूर्ति इस दिशा में प्राप्त हुई और अपने देश के साथ ही अन्य पराधीन राष्ट्र भी स्वाधीनता के लिए खड़े हो गये। अनेकों ने परिणाम स्वरूप वर्षों की दासता से मुक्ति पाई और आज भी अनेक देश इस दिशा में संघर्षरत हैं। यह सब भगवान् दयानन्द के एक मन्त्र का चमत्कार है। उर्दू के एक कवि ने ठीक ही कहा है –

तू नहीं, पैगाम तेरा हर किसी के दिल में है।
जल रही अब तक शमा रोशनी महफिल में है।।

महर्षि ने इस दिशा में स्थायित्व लाने के निमित्त एक आन्दोलन का भी सूत्रपात किया– वह था संसार के श्रेष्ठ पुरुषों का संसार के कल्याण के लिए एक वेदी पर उपस्थित होना। इस आन्दोलन को निरन्तर चालू रखने के लिये संगठन का गठन भी किया जिसे :**'आर्यसमाज'** अर्थात् श्रेष्ठ पुरुषों का संगठन '' Society of the noble men '' कहते हैं। महर्षि ने इस आन्दोलन के तीन चरण निश्चित किये– एक ईश्वर, एक धर्म तथा एक विश्व '' One God, one religion and one world '' संसार में अनेक महापुरुषों ने इस दिशा में अपनी योग्यता तथा क्षमता के अनुसार कार्य किया किन्तु इस मौलिक त्रिसूत्र के अभाव में उनके सम्पूर्ण प्रयास विफल रहे। उदाहरण स्वरूप, मार्क्स का सर्वहारा दर्शन तथा गाँधी जी का सर्वोदय। यहाँ एक ईश्वर से तात्पर्य एक प्राप्तव्य – ''One distinction and one God'' से है। एक धर्म से अभिप्राय एक आचरण–संहिता से है और एक विश्व से अर्थ एक परिवार से है। जिस प्रकार से एक परिवार में रहने वालों का एक आदर्श इसकी प्राप्ति का एक माध्यम अर्थात् सभी साधकों के साधन तथा साध्य का सामञ्जस्य। महर्षि ने इसके लिए तर्क युक्ति, प्रमाण तथा प्रयोग के आधार पर संसार के प्रमुखतम आचार्यों से वार्ता की और अपेक्षित प्रयास भी किया। उनके शब्दों में विश्व की अशान्ति का मूल कारण इस प्रकार के भेदों के माध्यम से उत्पन्न होने वाला घृणा और द्वेष का वातावरण ही है। ''यद्यपि प्रत्येक मत, पन्थ तथा सम्प्रदाय में कुछ–कुछ अच्छी बातें हैं तथापि आचार्यों

में परस्पर मतभेद होने के कारण अनुयायियों में मतभेद कई गुणा बढ़कर घृणा और द्वेष की उत्पत्ति करता है। क्या ही अच्छा होता कि सभी आचार्य प्रवर एक स्थल पर बैठकर मनुष्यमात्र के लिए सर्वतन्त्र, सार्वभौम तथा सनातन नियमों का संकलन कर पाते, जिससे मानव समाज घृणा और द्वेष से मुक्त होकर श्रद्धा और स्नेह की पवित्र स्थिति को प्राप्त होता।'' उन्होंने चाँदपुर (उत्तर–प्रदेश) में एक धर्म मेला के अन्दर इस प्रकार के विचार–विमर्श की व्यवस्था भी की। उसमें पादरी, मौलाना, पण्डित सभी उपस्थित थे। महर्षि ने तर्क, युक्ति, प्रमाण और प्रयोग से उन सबको सहमत न होते देख अन्ततोगत्वा एक अद्वितीय विधि उपस्थित की। सब अपने–अपने मत के श्रेष्ठ विचार पृथक्–पृथक् पत्रों पर लिखें। पुनः सबको एक साथ एकत्रित किया जाये और जो–जो विचार तथा आचार उपस्थित हों उनमें से सर्वमान्य विचार–आचार एक स्थल पर संकलित कर लिये जावें और हम सब उन पर हस्ताक्षर कर देवें, जिससे यह आचरण संहिता संसार के सभी मनुष्यों के लिए मान्य, व्यावहारिक तथा उपयोगी घोषित हो जावे, और इस प्रकार परस्पर विभिन्न मत मतान्तरों के आधार पर विभाजित मानव समाज एकता के सूत्र में बंधकर विश्व में शान्ति स्थापित कर सके। उपस्थित किसी भी प्रतिनिधि (हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई तथा ब्रह्म–समाज) ने इसका स्वागत अपने क्षुद्र स्वार्थ तथा नेतागिरि के कारण नहीं किया।

महर्षि भौतिक जगत् में भी अर्थ के दूषित वितरण के परिणाम का समाधान बताते हैं जो आज की समस्या का एकमात्र हल है। आज मजदूर जहां एक ओर कम से कम काम करना चाहता है, वहीं दूसरी ओर अधिक से अधिक वेतन चाहता है और इसी प्रकार महाजन जहाँ एक ओर अधिक से अधिक काम लेना चाहता है वहीं दूसरी ओर कम से कम वेतन देना चाहता है। तात्कालिक समाधान के रूप में इस विषम मनोवृत्ति के परिणाम स्वरूप ही मजदूर यूनियन, कर्मचारी संघ तथा मर्चेन्ट एसोसियेशन का विश्व में जाल बिछा दीखता है। समाधान तो ऋषि इसे पूर्णतया उलट देने में मानते हैं। अर्थ क्या हुआ? मजदूर अधिक से अधिक काम करें और कम से कम वेतन लेने की इच्छा रखें और महाजन कम से कम काम लेकर मजदूरों को अधिक से अधिक देने की कामना करें। विश्व-शान्ति के लिए व्यक्ति को कम से कम समाज से लेना होगा और अधिक से अधिक समाज को देना होगा तभी वर्तमान अशान्ति, अनिश्चिन्तता तथा अराजकता का अन्त होगा अन्यथा कदापि नहीं। मुझे कहने दीजिए– आज हमें भोग में बासा– होटल की प्रवृत्ति से हट कर परिवार में पाकशाला प्रवृत्ति में आना होगा। हम जब होटल में भोजन करते हैं तो कम से कम होटल वाले को देकर अधिक से अधिक खा लेना चाहते हैं। किन्तु जब हम परिवार में भोजन करते हैं तो कम से कम खाकर अधिक से अधिक परिवार के अन्य सदस्यों के लिए छोड़ना चाहते हैं। ऐसा मन कब बनेगा ? जब तन के निखार निमित्त दर्पण की भांति हमें मन के सुधार के लिए दर्शन मिलेगा। यह दर्शन जिस आचरण–संहिता में उपलब्ध है वह परमात्मा द्वारा प्रदत्त अपनी प्रजा के निमित्त विधि–निषेधात्मक वेदज्ञान है, जो सम्पूर्ण सृष्टि की अवधि के भीतर (चार अरब बत्तीस करोड़ वर्ष) उपस्थित विश्व के सभी श्रेष्ठतम उपभोक्ताओं मनुष्यमात्र के लिए समान रूप से सुखदायक तथा उपयोगी है। उससे हम न्यूनतम परिश्रम द्वारा अधिकतम सुख की प्राप्ति कर सकते हैं। इसे उपभोग के नियम– लातगयर कवायद '' Laws of Consumption ''कहते हैं। इसके अनुकूल चलकर हम शाश्वत सुख–आनन्द–मोक्ष की प्राप्ति कर सकते हैं। जो मानवमात्र का एकमात्र अभीष्ट लक्ष्य है। इस आचरण–संहिता का प्रमुख भाग कर्मफल मीमांसा कहलाता है और वह इस प्रकार है– दर्शनकारों की व्यवस्था में आयु, जाति तथा भोग मनुष्य को पूर्व जन्म के आधार पर ही मिलते हैं (यहां जाति शब्द का तात्पर्य योनि – पशु, पक्षी, पतंगा, मनुष्य आदि से है)। भोग दो प्रकार के हैं– एक सुखद तथा दूसरा दुःखद। दुःखद भोग में हम किसी का सहयोग प्राप्त कर ही नहीं सकते। कौन होगा ऐसा जो मेरे पचास बेत के दंड में कुछ स्वयं सहन कर मेरा सहयोग करना चाहेगा। किन्तु सुखद भोग में हम किसी को भी अपना भागीदार बना सकते हैं, और कोई भी भागीदार बनने को तैयार हो सकता है। उदाहरणार्थ मेरे पास भोग के पचास आम हैं। हम सब स्वयं भी खा सकते हैं और इनमें से आवश्यकतानुसार तथा इच्छानुसार चार आम खाकर शेष इक्कीस आम किसी को भी खाने को दे सकते हैं। स्वयं सम्पूर्ण खा जाने पर भोग मूलतया समाप्त हो जाता है। किन्तु कुछ खाकर और शेष दूसरों को खिलाकर हम दूसरों को खिलाये हुये आमों के भोग के द्वारा अपने लिये नूतन कर्म का सृजन कर लेते हैं जो हमें पुनः इस जन्म अथवा दूसरे जन्म में मिलेगा। इस दर्शन के प्रचार और प्रसार में प्रत्येक व्यक्ति खाने के चक्कर से निकल कर खिलाने की होड़ में खड़ा हो जायेगा। तब विश्व में अशान्ति का प्रश्न ही नहीं रहेगा और स्थायी शान्ति स्वतः उपस्थित हो जायेगी। आज हम व्यवहार पक्ष में ऐसा मानते हैं– '' Foolishmen invite or wisemen eat '' मूर्ख व्यक्ति खिलाते हैं और बुद्धिमान व्यक्ति खाते हैं। किन्तु स्थिति तब बदल जावेगी और नई लोकोक्ति तैयार होगी– '' Wise men invite and foolishmen eat '' बुद्धिमान व्यक्ति खिलाते हैं और मूर्ख व्यक्ति खाते हैं। परिणाम स्वरूप समस्त मानव समाज एक परिवार की संज्ञा को प्राप्त हो जायेगा जिसका प्रत्येक सदस्य कम से कम उपयोग करके अधिक से अधिक दूसरों के उपभोग निमित्त छोड़ने में अपने सम्पूर्ण विवेक और कौशल को लगा देगा, जिससे विश्व–शान्ति का महर्षि कल्पित रूप साकार हो उठेगा।

''अपनी आवश्यकता से अधिक पर अपना अधिकार मानना सामाजिक हिंसा है।'' इससे बचना ही विश्व-शान्ति का एकमात्र हल है। ●

पंजीयन संख्या (R.N.I. No.)- DELMUL/2005/15488
डाक पंजीकरण संख्या DL(c)-01/1213/2021-23
Licence to Post without prepayment of Postage. U (c)-289/2021-23

सोशल मीडिया के माध्यम से स्वामी आर्यवेश जी से जुड़ें

आर्य समाज के त्यागी, तपस्वी एवं तेजस्वी संन्यासी स्वामी आर्यवेश जी से जुड़ने के लिए इस लिंक पर क्लिक करें :- www.facebook.com/SwamiAryavesh व फेसबुक पेज को लाइक करें तथा अन्य मित्रों को भी प्रेरित करें।

ई-मेल : aryavesh@gmail.com
Tel. :-011-23274771

प्रतिष्ठा में :–

अवितरण की दशा में लौटाएँ –
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
"दयानन्द भवन" 3/5 आसफ अली रोड, नई दिल्ली–110002

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की 200वीं जयन्ती के सम्बन्ध में केन्द्रीय आर्य युवक परिषद् का एक प्रतिनिधि मण्डल महामहिम राष्ट्रपति जी से शिष्टाचार भेंट की

महामहिम राष्ट्रपति श्रीमती द्रौपदी मुर्मू जी को स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का चित्र भेंट कर अभिनन्दन किया गया

मंगलवार 7 फरवरी, 2023 को केन्द्रीय आर्य युवक परिषद् के प्रतिनिधि मंडल ने राष्ट्रपति भवन नई दिल्ली में महामहिम राष्ट्रपति श्रीमती द्रोपदी मुर्मू जी से भेंट शिष्टाचार भेंट की व उन्हें महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का चित्र, जीवनी एवं सत्यार्थ प्रकाश भेंट कर अभिनंदन करके समस्त आर्य जगत की ओर से बधाई व शुभकामनाएं प्रदान की।

केन्द्रीय आर्य युवक परिषद् के राष्ट्रीय अध्यक्ष अनिल आर्य ने महामहिम राष्ट्रपति जी से चर्चा के दौरान बताया कि इस वर्ष आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का 200 वाँ जयंती वर्ष चल रहा है, स्वतंत्रता संग्राम, पाखंड, अंधविश्वास के उन्मूलन में उनका उल्लेखनीय योगदान रहा। महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने नारी शिक्षा, विधवा विवाह एवं महिलाओं के उत्थान के लिए विशेष कार्य किया था। महर्षि ने ही कहा था कि कोई कितना ही करे पर स्वदेशी राज्य सर्वोत्तम होता है।

राष्ट्रपति महोदया ने आर्य समाज के शिक्षा के क्षेत्र में किये जा रहे कार्य की प्रसंशा की। उन्होंने कहा कि एक अच्छा चरित्रवान इंसान बनाना सराहनीय कार्य है। उन्होंने कहा कि ईश्वर का हमे सदैव धन्यवाद करना चाहिए। इस अवसर पर प्रवीण आर्या 'पिंकी' ने एक मधुर गीत भी सुनाया।

अन्त में केन्द्रीय आर्य युवक परिषद् के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री अनिल आर्य जी ने 15 मिनट का अमूल्य समय प्रदान करने के लिए पुनः हार्दिक आभार एवं धन्यवाद व्यक्त किया। प्रतिनिधि मण्डल में श्री दुर्गेश आर्य, श्री धर्म पाल आर्य, श्री देवेन्द्र भगत भी उपस्थित थे।

– प्रवीण आर्य, मीडिया प्रभारी,
सम्पर्कः 9911404423

आर्य समाज महर्षि दयानन्द धाम द्वारा 50 जरूरतमन्द परिवारों को राशन व कम्बल वितरण किया गया

सत्य सनातन वैदिक धर्म की रक्षा मानवता एवं परोपकार के कार्यों से सम्भव है – ओम प्रकाश आर्य

आर्य समाज महर्षि दयानन्द धाम, बाजार हंसली, अमृतसर द्वारा जनवरी माह के अन्तिम रविवार दिनांक 29 जनवरी, 2023 को लाला लाजपत राय जी की जयन्ती पर विशेष सत्संग का आयोजन करके जरूरतमंद परिवारों को राशन व कम्बल वितरण का कार्यक्रम श्री ओम प्रकाश आर्य जी की अध्यक्षता में किया गया।

कार्यक्रम का शुभारम्भ आचार्य दयानन्द शास्त्री जी ने हवन यज्ञ के माध्यम से प्रारम्भ करवाया। यज्ञ में आहुतियाँ प्रदान करने वालों में श्रीमती कमलेश रानी, श्रीमती सुनीता अरोड़ा व रेहान जी ने शेरे पंजाब लाला लाजपत राय जी की जयन्ती पर उनके द्वारा किये गये मानवता के कार्यों को याद करते हुए आहुतियाँ प्रदान की।

अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में श्री ओम प्रकाश आर्य जी ने कहा कि सत्य सनातन वैदिक धर्म, संस्कृति की रक्षा मानवता व परोपकार के कार्यों को करके ही किया जा सकता है। 'परोपकाराय पुण्याय पापाय परपीडनम्' दूसरों की सेवा, दूसरों की पीड़ा हरने से जो पुण्य होता है, इसके समान कोई पुण्य नहीं। देश की आजादी में अपने प्राणों की आहुति देने वाले तमाम देश भक्तों ने परोपकार ही तो किया है जिसके बदौलत हम सभी आज आजाद हैं तथा खुले आसमान में श्वांस ले रहे हैं, हम शेरे पंजाब लाला लाजपत राय जी के उपकारों को कैसे भूल सकते हैं। उनकी प्रेरणा हमें मानवता के पथ पर चलकर दीन–दुखियों की सेवा करना ही परम धर्म बताता है। इन कार्यों से ही अपनी सभ्यता और संस्कृति की रक्षा हो सकती है। श्री ओम प्रकाश आर्य जी ने कहा कि हम सभी को मानवता के कार्य को और तीव्र गति से करते रहने की आवश्यकता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने आर्य समाज के सिद्धान्त

इस अवसर पर मुख्य अतिथि श्री बाल कृष्ण शर्मा चेयरमैन नशा विरोधी संगठन, श्री जवाहर लाल मेहरा प्रधान आर्य समाज मॉडल टाऊन, श्री सुभाष नरूला, शारदा बाधवा, श्री राकेश बाधवा, श्री विपीन अग्रवाल, श्री अश्विनी अग्रवाल, श्री अनिल टंडन, श्री सतपाल एवं श्री हिमांशु मेहरा आदि महानुभाव उपस्थित होकर जरूरतमंद परिवारों को राशन एवं कम्बल वितरित करके परोपकार का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया।

कार्यक्रम के दौरान देश भक्ति व प्रभु भक्ति के भजन सुलोचना आर्या, सुनीता पसाहन, शिवलता आर्या एवं विपीन अग्रवाल ने गाकर सबको मंत्र मुग्ध कर दिया। भजन के बोल – 'ओ३म् नाम का प्लया पी ले तू तर जायेगा' पर सभी उपस्थिति जन समूह झूमने लगे।

कार्यक्रम को सफल बनाने में जिन महानुभावों का प्रमुख योगदान था उनके नाम उल्लेखनीय हैं – सर्वश्री अर्जुन कुमार, राज कुमार, अशोक वर्मा, पंकज, कुशाल, अभिजीत, कोमल, पूनम अग्रवाल, अनूप, नीलम, राकेश आर्या आदि ने अथक परिश्रम किया।

प्रो० विट्ठलराव आर्य, सभा मंत्री, प्रकाशक व मुद्रक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, 3/5 महर्षि दयानन्द भवन, (रामलीला मैदान/आसफ अली रोड), नई दिल्ली-110002 के लिए प्रकाशित तथा ज्योति प्रिंटिंग प्रेस, ई-94, सैक्टर-6, नोएडा-201301 से प्रकाशित एवं मुद्रित। (दूरभाष : 011-23274771)
सम्पादक : प्रो० विट्ठलराव आर्य (सभा मन्त्री) मो.:0-9849560691, 0-9013251500 ई-मेल : sarvadeshik@yahoo.co.in, sarvadeshikarya@gmail.com वैबसाइट : www.vedicaryasamaj.com
वैदिक सार्वदेशिक साप्ताहिक में छपे लेखों तथा विचारों से सम्पादक या सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की सैद्धान्तिक मतैक्यता होना अनिवार्य नहीं है।